चन्दामामा
जुलाई १९७२
१० P

Photo by : BRAHM-DEV

1972

the Silver Jubilee Year of Chandamama brings New Twins to Chandamama family !

CHANDAMAMA	:	**Bengali**
JAHNAMAMU	:	**Oriya**

language editions to serve the Children of Bengal and Orissa

Inaugural issues are now available at all Book Stalls.

Published
now in TEN National Languages CHANDAMAMA continues to educate and entertain the Children of India through its lively tales and lovely format !

*

Paise **90** a copy

Rs. **10.80** a year

★

FOR PARTICULARS:

DOLTON AGENCIES
'CHANDAMAMA BUILDINGS'
MADRAS-26

ठीक समय पर सही काम...

पिताजी, आज हमारी स्कूल में क्रिकेट मैच था लेकिन मुझे तो जल्दी ही 'आउट' कर दिया।
अच्छा? क्यों, क्या हुआ बेटे?

हुआ यह कि सुनील ने 'शॉर्ट बॉल' दी, मैंने 'कट' करना चाहा लेकिन बॉल 'एज' पर लगी, उछली और विकेट कीपर ने झट 'कैच' कर लिया।
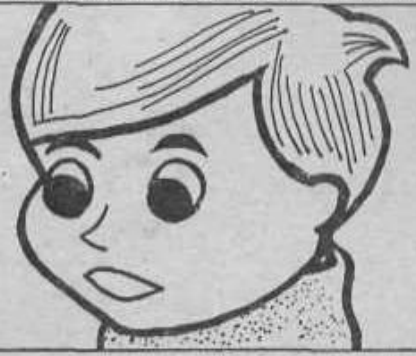
बुरा हुआ! लेकिन बेटे, शार्ट बॉल के लिए तो कई स्ट्रोक हैं, जैसे 'हुक'। अपनी दाँयी ओर ऐसे घूमते कि बॉल तुम्हारी बाँयीं ओर ऊँचाई पर आ जाती। फिर 'बैट' ऊपर की ओर घुमाते और हिट कर देते।

भरपूर ताकत से मारते तो इस तरह समूचा घूम जाते कि विकेट कीपर शायद ठीक सामने होता।

खैर छोड़ो, बेटे, साढ़े आठ बजने वाले हैं। चलो सो जाएँ। लेकिन हाँ, तुमने अपने दाँत तो साफ़ कर लिए हैं न?
पिताजी, मैंने 'डिनर' के बाद कुल्ले तो किए थे।

नहीं बेटे, ऐसे नहीं चलेगा। तुम्हें अपने दाँत हर रात और सवेरे ब्रश करने ही चाहिए। इससे दाँतों में फँसे सभी अन्न-कण निकल जाएँगे; दाँतों में सड़न नहीं होगी। तुम्हें मसूढ़ों की भी मालिश करनी चाहिए ताकि वे स्वस्थ और मज़बूत रहें।

हाँ, पिताजी!
चलो, हम दोनों फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट से अपने दाँत ब्रश कर लें।

Forhans
FOR THE GUMS

चन्दामामा
संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'
इस अंक के साथ 'चन्दामामा' प्रकाशन अपने छब्बीसवें बर्ष में प्रवेश कर रहा है। इस अंक में हम पूर्व प्रकाशित उत्तम रचनाओं तथा बेताल कथा की प्रारंभिक कहानी को हज़ारों नये पाठकों के वास्ते पुन: प्रकाशित कर रहे हैं। अत: इस अंक में हम धारावाही 'यक्ष पर्वत' तथा 'महाभारत' नहीं दे रहे हैं, अगले अंक से यथा प्रकार प्रकाशित करेंगे। इस मास से 'चन्दामामा' बंगाली तथा ओरिया भाषाओं में प्रकाशित हो रहा है।
बर्ष : २५ जुलाई १९७२ अंक : १
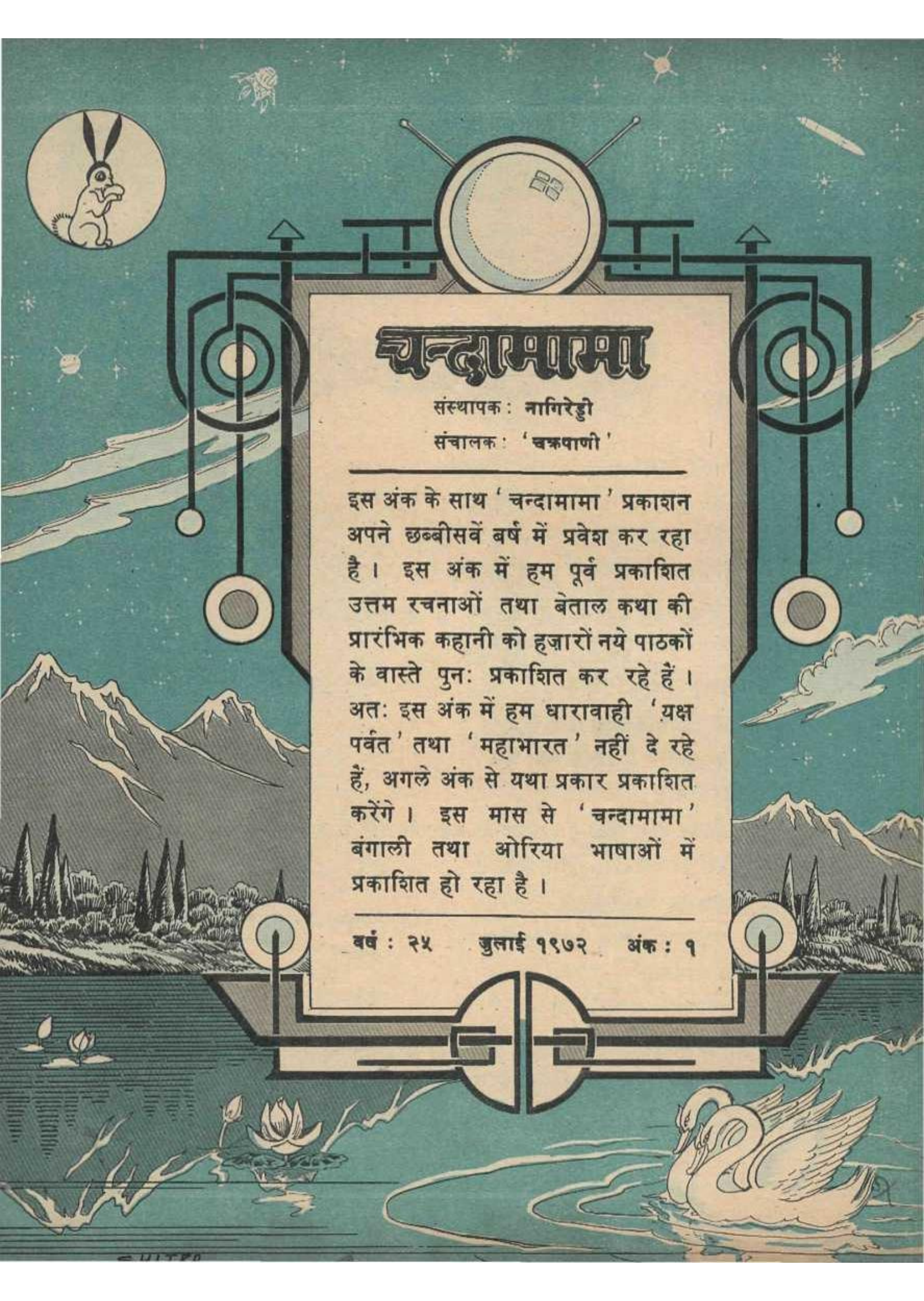
अमर वाणी

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा,
वृद्धा नते ये न वदंति धर्मम्,
धर्मो न वै यत्र च नास्ति सत्यम्,
सत्यम् न तद्यच्छल नानु विद्दम् । ॥ १ ॥

[जहाँ वृद्ध न हो, वह सभा नहीं है, जो धर्म का ज्ञान नहीं रखते, वे वृद्ध नहीं। सत्य के विना धर्म नहीं होता। सत्य में धोखा नहीं होता।]

विद्या ददाति विनयम्;
सा चे दविनया वहा,
किं कुर्मम:? कस्य वा ब्रूम:?
गरदायाम् स्व मातरि! ॥ २ ॥

[विद्या से विनय प्राप्त होता है। माता के जहर खिलाने के समान यदि वही विद्या अविनय प्रदान करे तो करना ही क्या है? किससे कहे?]

राजवत् पुत्रदाराश्च,
स्वामिवत् मित्र बांधवा:,
आचार्यवत् सभामध्ये
भाग्यवंतं स्तुवंति हि। ॥ ३ ॥

[भाग्यवन् के साथ पत्नी और संतान भी राजा के समान व्यवहार करते हैं, बन्धु और मित्र मालिक के समान तथा सभा में सभासद गुरु की भांति देखते हैं।]

संकेतोंवाला पंडित

प्राचीन काल में कांचीपुर में एक पंडित रहा करता था। उसे सब लोग "संकेतोंवाला पंडित" कहकर पुकारते थे। वह इस बात का प्रचार करता था कि मनुष्यों को अपने विचार शब्दों के द्वारा व्यक्त करने के बदले संकेतों द्वारा प्रकट करना कहीं अच्छा है। एक दिन उस पंडित ने राजा के पास जाकर यह बात कही।

राजा पंडित के इस तर्क पर मन ही मन हंस पड़ा और बोला—"पंडित जी, यह बात कहने के लिए तुम इतनी दूर चले आये हो! मैंने बहुत समय पहले ही संकेतोंवाले एक शास्त्री को शिवगंगपुर की पाठशाला में नियुक्त किया है।

राजा ने मजाक में ये बातें कहीं, पर पंडित ने उन बातों को सत्य समझा और बोला—"महाराज, आप तो बड़े ही दूर-दर्शी मालूम होते हैं। बचपन से ही मनुष्यों को संकेत-शास्त्र का अध्ययन कराने से बड़ा लाभ होता है। मैं उन संकेतोंवाले शास्त्री के दर्शन कर लौटता हूँ। आज्ञा दीजिये।" इन शब्दों के साथ पंडित शिवगंगपुर के लिए चल पड़ा।

दो-तीन दिन की यात्रा के बाद संकेतोंवाला पंडित शिवगंगपुर में पहुँचा। वहाँ की पाठशाला के अधिकारियों ने उचित रूप में पंडितजी का सत्कार किया और कहा—"पंडितजी, हमारे शस्त्रीजी तो देशाटन पर गये हैं, वे एक महीने के बाद ही वापस लौटेंगे।"

"अच्छी बात है, मगर इतनी दूर आकर उनके दर्शन किये बिना मैं कैसे वापस जाऊँ? शास्त्रीजी के लौटने तक मैं यहीं रह जाऊँगा।" पंडित ने कहा।

पाठशाला के अधिकारियों ने सोचा कि ये पंडित आसानी से हमें छोड़ने वाले नहीं

हरीश कुमार

हैं, इसलिए उन लोगों ने एक उपाय किया। पाठशाला का एक नौकर काना था। पाठशाला के अधिकारियों ने उसे शास्त्री जी का वेष बनाया और उसे समझाया– "अबे सुनो, पंडित जी संकेतों के द्वारा तुम से प्रश्न पूछेंगे। तुम्हें भी संकेतों के द्वारा ही उत्तर देना होगा। मगर तुम किसी भी हालत में अपना मुँह मत खोलो।"

इसके बाद अधिकारियों ने पंडित जी से कहा–"पंडित जी! हमारे संकेतोंवाले शास्त्री जी अपना देशाटन समाप्त कर लौट आये हैं। वे इस वक़्त सामने वाले कमरे में हैं। आप उनसे मिल सकते हैं।"

संकेतोंवाला पंडित बड़ी प्रसन्नता के साथ शास्त्रीजी से मिलने कमरे में पहुँचा। वहाँ पर पंडित ने देखा, एक काना व्यक्ति सर पर पगड़ी बाँधे, कंधे पर काश्मीरी शाल ओढ़े बैठा हुआ है।

संकेतोंवाला पंडित शास्त्री के सामने जा बैठा और उस काने को एक उंगली दिखायी। इसके उत्तर के रूप में काने ने दो उंगलियाँ दिखायीं।

इस पर संकेतोंवाले पंडित ने तीन उंगलियाँ दिखायीं। इस पर काने ने नाराज़ होकर अपनी मुट्ठी कसकर दिखायी।

तब संकेतोंवाले पंडित ने हंसते हुए एक बड़ बेर दिखाया। काने ने एक पोटली में से रोटी निकाल कर पंडित को दिखायी। तुरंत संकेतोंवाला पंडित उठ खड़ा हुआ
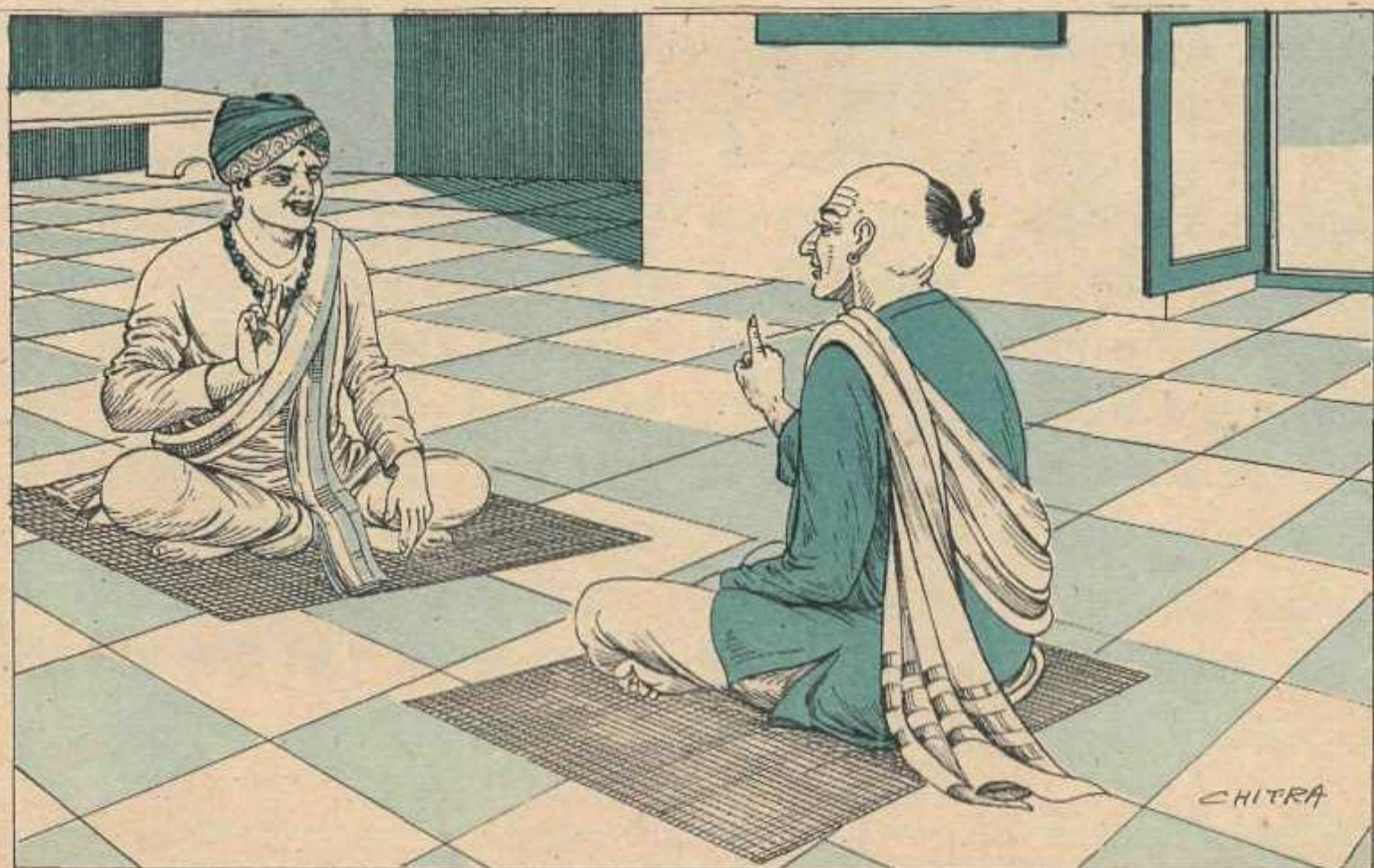
और कानें को प्रणाम करके बाहर चला आया। कमरे के बाहर प्रतीक्षा करनेवाले पाठशाला के अधिकारियों ने पंडितजी से पूछा–"पंडितजी! हमारे संकेतोंवाले शास्त्री जी के बारे में आपके क्या विचार हैं?"

इस पर पंडितजी ने यों कहा–"आपके संकेतोंवाले शास्त्रीजी बड़े ही योग्य व्यक्ति हैं। वे एक उत्तम कोटि के दार्शनिक भी हैं। मैंने यह बताने के लिए एक ही उंगली दिखाई कि ईश्वर एक है। लेकिन उन्हों ने दो उंगलियाँ दिखायीं, जिसका अर्थ यह है कि ईश्वर एक नहीं, शिव और केशव-दो हैं। इस पर मैंने सोचा, तब तो ब्रह्मा को मिला कर ईश्वर तो त्रिमूर्ति हैं, और यह सोचकर मैंने तीन उंगलियाँ दिखायीं। लेकिन उन्हों ने मुट्ठी बाँध कर यह बताया कि वे तीनों एक ही हैं।

"इस पर ईश्वर को अत्यंत दयालू जताने के लिए उन्हों ने मानव जाति को जो अत्यंत रुचिकर फल प्रदान किये हैं, उनमें बड़ बेर भी एक है, अत: अपने पास के एक बेर निकाल कर मैंने उन्हें दिखाया।

"मगर वे तो बड़े ही तत्ववेत्ता थे, इसलिए शास्त्रीजी ने अपने पास की एक रोटी मुझे दिखाते हुए यह आशय प्रकट किया कि भगवान के द्वारा प्रदत्त रोटी समस्त मानव समुदाय को सभी समयों में उपलब्ध होती है। बेर की अपेक्षा मानव के श्रम का फल तथा अत्यावश्यक वस्तु रोटी है। उनके संकेत का जो यह

विशिष्ट अर्थ था, उसे भी मैंने समझ लिया। संकेतोंवाला पंडित ये बातें कहकर खुशी-खुशी चला गया।

इसके बाद पाठशाला के अधिकारियों ने काने को बुलाकर पूछा–"अरे, पंडितजी ने तुम से संकेतों के द्वारा क्या पूछा?"

काने ने यों जवाब दिया–"सरकार, ये पंडितजी बड़े ही धूर्त मालूम होते हैं। उन्हों ने कमरे में प्रवेश करते ही मेरा मजाक़ उड़ाने के लिए उंगली उठाकर संकेतों द्वारा पूछा कि तुम काने हो, तुम्हारी एक ही आँख दीखती है।"

"इस पर मैं नाराज़ नहीं हुआ, बल्कि उन्हें दो उंगलियाँ दिखाते हुए मैंने यह समझाया कि तुम्हारी दो आँखों की अपेक्षा मेरी एक ही आँख कहीं अच्छी है।

"इससे पंडितजी चुप नहीं रहें, उन्हों ने फिर मुझे तीन उंगलियाँ दिखायीं, जिस का अर्थ था कि मेरी एक आँख और उनकी दो आँखें मिल कर तीन आँखें हो जाती हैं।

"मुझे उन पर बड़ा क्रोध आया, तब मैंने अपनी मुट्ठी बाँध कर उन्हें दिखायी, जिसका अर्थ था कि फिर तीन उंगलियाँ दिखायीं तो अपनी मुट्ठी से तुम्हारी नाक पर मुक्का मार दूँगा।

"इस पर पंडितजी बेचारे घबरा गये, मुझे शांत करने के लिए एक बढ़ बेर निकाल कर मुझे घूस देना चाहा।

"मैं उनके घूस के लोभ में नहीं पड़ा, बल्कि अपनी पोटली से रोटी निकाल कर उन्हें दिखाया, मेरा मतलब था कि तुम्हारे उस फल की मुझे ज़रूरत नहीं है। मेरी रोटी के सामने तुम्हारा फल तुच्छ है।"

"इससे उस दृष्ट ने समझ लिया कि उसकी दाल मेरे पास गलने की नहीं है। इसलिए मुझे प्रणाम करके भाग खड़ा हुआ।"

पाठशाला के अधिकारी उन दोनों की व्याख्या सुन कर बहुत खुश हुए। यह समाचार जब राजा को दिया गया तब वे हंसते-हंसते लोट-पोट हो गये।

असली लक्ष्मी

प्राचीनकाल में उज्जयिनी नगर पर राजा धीमंत शासन करता था। उसके पास एक महाराजा के लिए आवश्यक आठों प्रकार के ऐश्वर्य विद्यमान थे।

एक दिन राजा धीमंत के पास एक योगी आया। योगी को देख राजा ने पूछा– "योगी महाराज, तुम्हें क्या चाहिए?"

"महाराज, मेरे पास एक लोहे का लोटा और एक लाठी है। इन्हें आपको बेचकर धन ले जाने के लिए आया हूँ।" योगी ने जवाब दिया।

"कितने में बेचोगे?" राजा ने पूछा।

"इन्हें लेकर बदले में एक लाख रुपये दे दीजिये।" योगी ने कहा।

इस पर राजा ने आगे-पीछा सोचे बिना, मंत्रियों के मना करने पर भी योगी को लाख रुपये दिलाये और उन दोनों चीज़ों को खज़ाने में रखवा दिये।

उस दिन रात को राजा धीमंत ने एक सपना देखा। सपने में एक स्त्री समस्त आभूषण धारण करके राजमहल से बाहर जाते उसे दिखाई दी। राजा ने उस स्त्री से पूछा–"तुम कौन हो?"

"मैं धनलक्ष्मी हूँ।" स्त्री ने कहा।

"क्यों यहाँ से जा रही हो?" राजा ने फिर पूछा।

"तुमने एक लाख रुपये देकर एक योगी से बेकार के लोटा व लाठी ख़रीद कर मेरा अपमान किया। इसलिए मैं तुम्हारे महल में अब एक क्षण भी न रहूँगी।" धनलक्ष्मी ने कहा।

"तब तो ज़रूर चली जाओ" राजा ने लापरवाही से कहा। रात के दूसरे पहर में सपने में राजा को एक दूसरी स्त्री राजमहल से बाहर जाते दिखाई दी। वह लंबी, मोटी थी और नव यौवना भी थी।

सुनंदा राय

"तुम कौन हो?" राजा ने पूछा।

"मैं बल-लक्ष्मी हूँ।" स्त्री ने जवाब दिया।

"क्यों जा रही हो?" राजा ने पूछा।

"धनलक्ष्मी ने तुमको त्याग दिया, अब तुम कितने समय तक मेरी रक्षा करोगे? इसलिए मैं भी जा रही हूँ। अब मैं एक क्षण भी यहाँ न रहूँगी।" बल-लक्ष्मी ने उत्तर दिया।

"चली जाओ।" राजा ने कहा।

इसके बाद तीसरे पहर में सपने में राजा को एक बूढ़ी दिखाई दी। वह भी राजमहल से जा रही थी। उसके बाल पक गये थे, मगर उसका चेहरा दमक रहा था।

"तुम कौन हो?" राजा ने पूछा।

"मैं ज्ञान-लक्ष्मी हूँ।" स्त्री ने कहा।

"क्यों चली जा रही हो?" राजा ने फिर पूछा।

"धनलक्ष्मी और बल-लक्ष्मी के चले जाने के बाद मुझे यहाँ पर स्थान ही कहाँ है? इसलिए मैं भी जा रही हूँ।" ज्ञान-लक्ष्मी ने कहा।

"ज़रूर जाओ।" राजा ने कहा।

इसके बाद चौथे पहर में सपने में राजा को देवता जाति की एक स्त्री महल से बाहर जाते दिखाई दी।

"तुम कौन हो?" राजा ने पूछा।

"मैं धैर्य-लक्ष्मी हूँ।" स्त्री ने कहा।

राजा ने उसे रोकते हुए पूछा—"तुम यहाँ से क्यों चली जा रही हो?"

"सब तुमको छोड़कर चली जा रही हैं। अब मैं तुम्हारे पास क्यों रहूँ?" धैर्यलक्ष्मी ने कहा।

राजा ने झट उसका हाथ पकड़ लिया और कहा—"तुम यहाँ से नहीं जा सकती। तुम्हारा आसरा देख और लक्ष्मियों के जाते मैंने परवाह नहीं की। तुम्हारे रहने से मुझे बल प्राप्त होगा।" इस पर धैर्य लक्ष्मी ने हँसकर कहा—"अच्छी बात है! तब तो मैं तुम्हारे पास ही रह जाऊँगी।" राजा प्रसन्नता के साथ नींद से जा उठा।
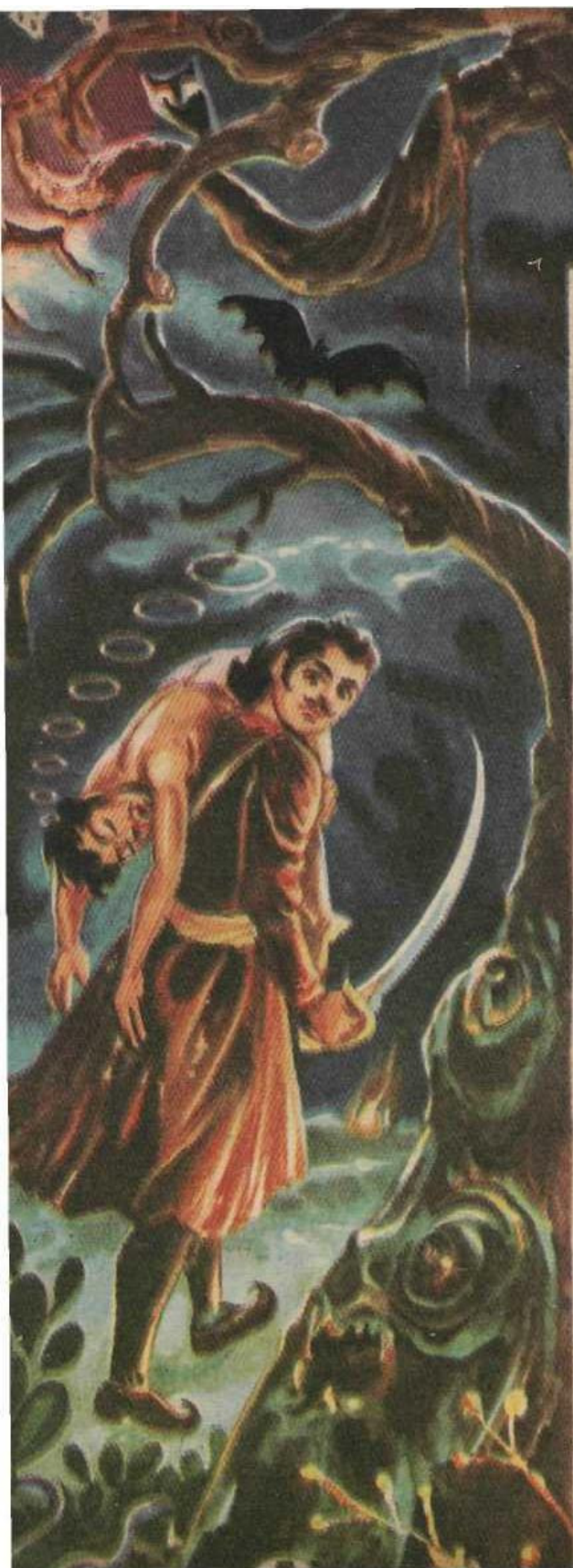
बेताल कथाएँ

गोदावरी के तट पर प्रतिष्ठानपुर नामक एक नगर था। एक जमाने में विक्रमार्क उस राज्य का शासक था। विक्रमार्क के दरबार में प्रति दिन क्षांतिशील नामक एक भिक्षु आता, कोई न कोई फल भेंट देकर चला जाता। राजा उन फलों को अपने कोशाध्यक्ष के हाथ सौंप देता। इस प्रकार कई दिन बीत गये।

एक दिन भिक्षु ने राज दरबार में प्रवेश कर राजा को एक फल दिया और अपने रास्ते चला गया। उस वक़्त द्वारपालों की आँख बचाकर एक बन्दर दरबार में आया। राजा ने वह फल बन्दर के आगे बढ़ाया। बन्दर जब उस फल को खाने लगा, तब उसमें से एक क़ीमती हीरा नीचे गिरा।

राजा को आश्चर्य हुआ, उसने अपने कोशाध्यक्ष को बुला कर पूछा—"मैं प्रति

प्रथम

दिन जो उपहार तुम्हारे हाथ सौंपता आ रहा हूँ, तुमने उन्हें क्या किया?"

यह सवाल सुनकर कोशाध्यक्ष चौंक पड़ा और बोला-"महाराज, रोज़ आप जो फल दे रहे थे, मैं उन्हें खिड़की की राह से खज़ाने में फेंकता गया। आप की आज्ञा हो तो खज़ाने के द्वार खोल कर देख आऊँगा कि उन फलों का क्या हाल है?"

राजा ने अनुमति दी। थोड़ी देर बाद कोशाध्यक्ष ने लौट कर बताया-"महाराज, सारे फल सड़ गये हैं, लेकिन उनकी जगह हीरों का एक ढेर लगा हुआ है।"

राजा उसकी ईमानदारी पर मुग्ध हो गया और वे सारे हीरे उसे दे दिये। दूसरे दिन दरबार में पहुँच कर भिक्षु जब फल देने लगा, तब राजा ने पूछा-"भिक्षु! तुम रोज़ ऐसे अमूल्य उपहार मुझे क्यों देते हो? इसका कारण बताने पर ही मैं यह फल ले सकता हूँ।" इस पर भिक्षु ने शांत स्वर में कहा-"राजन, मुझे एक मंत्र को प्राप्त करना है। उसके लिए मुझे एक महान वीर की आवश्यकता है। इसलिए मैं आपकी सहायता चाहता हूँ।"

राजा ने भिक्षु की मदद करने को मान लिया। इस पर भिक्षु ने राजा से कहा-"आगामी कृष्णा चतुर्दशी की रात्रि में तुम्हें श्मशान में आना होगा। श्मशान के वटवृक्ष के नीचे मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा।"

"भिक्षु! मैं ज़रूर आ जाऊंगा।" राजा ने वचन दिया। भिक्षु प्रसन्न होकर चला गया। कृष्णा चतुर्दशी के दिन विक्रमार्क काले वस्त्र धारण कर हाथ में तलवार लिये श्मशान की ओर चल पड़ा।

श्मशान में भयंकर चिताएँ जल रही थीं। सर्वत्र मनुष्यों की हड्डियों तथा कपालों के ढेर लगे हुए थे। भूत और बेताल आनंद के मारे नाच रहे थे।

राजा विक्रमार्क श्मशान के बीच पहुँचा। वट वृक्ष के नीचे भिक्षु को देख बोला-"भिक्षु! बताओ, तुम मुझसे क्या चाहते हो?"

भिक्षु राजा के आगमन पर बहुत प्रसन्न हुआ और बोला–"राजन, आप कृपया यहाँ से सीधे दक्षिण की ओर जाइये। वहाँ पर आप को शीशम का एक पेड़ दिखाई देगा। उस पर एक पुरुष का शव लटकता होगा। उसे यहाँ ले आइये।"

राजा ने मान लिया, चिता में से एक जलती लकड़ी को मशाल की तरह हाथ में ले दक्षिण की ओर चला और शीशम के पेड़ के पास पहुँचा। वहाँ पर अधजला एक शव पेड़ पर लटकता दिखाई दिया। राजा ने पेड़ पर चढ़ कर रस्से को काट डाला जिससे शव नीचे जा गिरा।

नीचे गिरते ही वह शव चोट खाये मनुष्य की भांति रोने लगा। राजा ने सोचा कि उसमें प्राण है। इसलिए वह पेड़ से उतर आया और करुणा भाव से उसका स्पर्श किया। इस पर वह शव अट्टहास कर उठा। राजा को यह मालूम न था कि उसमें बेताल छिपा हुआ है। इसलिए उसने कहा–"तुम हँसते क्यों हो? चलो मेरे साथ!"

राजा के मुँह से ये शब्द निकलते ही शव गायब हो गया और फिर पेड़ पर लटकते दिखाई दिया। राजा ने पेड़ पर चढ़ कर फिर उसे नीचे गिराया और उस शव को कंधे पर डाल चुप चाप श्मशान की ओर चलने लगा।

तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, तुम्हारे मनोरंजन के लिए मैं एक कहानी सुनाता हूँ, सुनो!" इन शब्दों के साथ बेताल यों कहने लगा:

प्राचीन काल में अंगदेश पर यशःकेतु नामक एक राजा राज्य करता था। उसने अपने पराक्रम के बल पर सभी शत्रु राजाओं को हराया, और राज्य का सारा भार अपने मंत्री दीर्घदर्शी के हाथों में सौंप कर वह अंतःपुर के सुखभोगों में लीन रहा करता था।

मंत्री दीर्घदर्शी राजा का बड़ा विश्वासपात्र था, फिर भी राज्य के कुछ अधिकारियों ने उस पर इलज़ाम लगाया। वे लोग मंत्री से ईर्ष्या करते थे। इसलिए
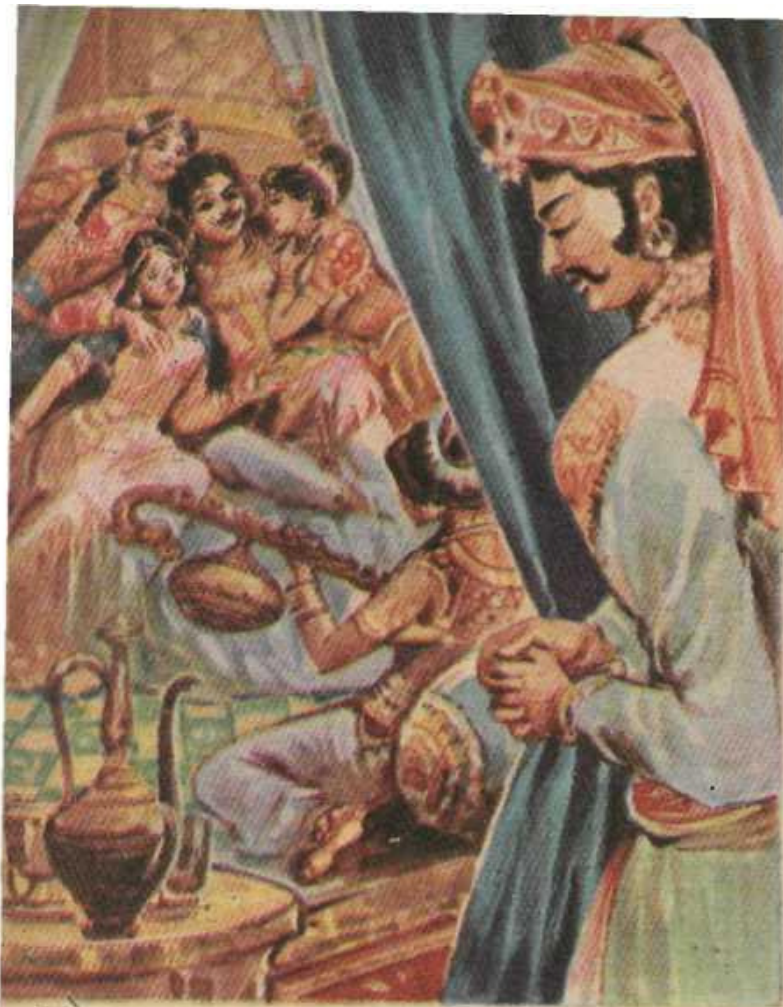
यह प्रचार किया कि मंत्री ने राजा को भोगलालसी बना कर वह खुद राज्य चला रहा है। जब मंत्री दीर्घदर्शी के कानों में यह बात पड़ी तब वह बड़ा दुखी हुआ और उसने अपनी पत्नी से कहा-"राजा तो सुख-भोगों का गुलाम हो गया तो मैं राज्य का भार वहन कर रहा हूँ, लेकिन लोग मुझ पर इलजाम लगा रहे हैं कि मैं राज्य को लूट रहा हूँ। यह बात तो झूठ है, फिर भी हमें इसकी उपेक्षा नहीं करनी है! बताओ, मैं क्या करूँ?"

इस पर मंत्री की पत्नी मेधाविनी ने अपने पति से कहा-"आप तीर्थाटन का बहाना करके राजा की अनुमति लेकर देशाटन पर चले जाइये। इससे यह होगा कि आप पर जो इलजाम लगाया जा रहा है, वह झूठा साबित होगा, और राजा सुख-भोगों से दूर हट जायेंगे।"

दीर्घदर्शी ने मौक़ा पाकर एक दिन राजा से कहा-"महाराज, मैं थोड़े दिन तक तीर्थाटन करके पुण्य प्राप्त करना चाहता हूँ, मुझे अनुमति देने की कृपा करें।" राजा ने समझाया कि घर बैठे ही पुण्य कमाया जा सकता है। किंतु मंत्री ने निवेदन किया-"राजन, शरीर में ताक़त के होते तीर्थाटन करने की इच्छा है। उम्र के ढल जाने पर संभव न होगा।"

दीर्घदर्शी राजा तक को तीर्थाटन का समाचार न दे चल पड़ा। कुछ समय की यात्रा के बाद वह समुद्र के तट पर स्थित पुंड्र देश में जा पहुँचा। वहाँ पर निधिदत्त नामक एक व्यापारी के साथ उसकी मैत्री हुई। निधिदत्त अपने व्यापार के काम पर सुवर्णद्वीप में जा रहा था। इस पर दीर्घदर्शी ने भी उसके साथ जाने की इच्छा प्रकट की।

दूसरे दिन दीर्घदर्शी भी निधिदत्त के साथ व्यापारी नौका पर रवाना हो गया। वे सुवर्णद्वीप में पहुँचे। वहाँ पर कुछ दिन तक अच्छा व्यापार भी चला।

लौटती यात्रा मे दीर्घदर्शी ने समुद्र के बीच एक अद्‌भुत दृश्य को देखा। एक

लहर के साथ समुद्र में से एक अद्‌भुत वृक्ष ऊपर उठा। वह वृक्ष सोने का था, उसकी शाखाएँ मूँगों की थीं, उसके फल रत्नों के थे। उस वृक्ष पर रत्नों की शय्या पर एक अनुपम सुंदरी बैठे गा रही थी। दीर्घदर्शी के देखते-देखते वह वृक्ष तथा वह सुंदरी भी समुद्र के जल में डूब गये।

"यह कैसा अद्‌भुत है! मुझे इसे देखने पर लगता है कि क्षीर सागर से कल्पवृक्ष तथा लक्ष्मीदेवी अवतरित हुए हो।" दीर्घदर्शी ने कहा।

दीर्घदर्शी को विस्मित देख नाविकों ने कहा—"आपके लिए यह दृश्य विचित्र लगता है, लेकिन हम इस प्रदेश में हर बार इस दृश्य को देखते आ रहे हैं।"

यात्रा समाप्त होने पर दीर्घदर्शी व्यापारी से विदा लेकर अंगदेश को लौट आया।

दीर्घदर्शी राजा की स्वीकृति पाये बिना तीर्थाटन पर चला गया था, इसलिए राजा यशःकेतु गुप्तचरों के द्वारा सारे राज्य में उसकी खोज करवा रहा था। गुप्तचरों ने दीर्घदर्शी को राजधानी में लौटते नगर के बाहर ही देख लिया और राजा को इसकी सूचना दी। इस पर यशःकेतु दीर्घदर्शी के सामने जा पहुँचा, गले लगाकर उसे अंतःपुर में ले आया और पूछा—"तीर्थाटन की चाह ने तुम्हारे मन को कठोर बनाया। बताओ, तुमने किन किन तीर्थों का सेवन किया और क्या क्या विचित्र बातें देखीं?"

दीर्घदर्शी ने तीर्थाटन के सारे समाचार राजा को कह सुनाये और अंत में समुद्र मध्य में दिखाई दिये अद्‌भुत वृक्ष और अनुपम सुंदरी का भी वृत्तांत बताया।

इस पर राजा का मन उस कन्या पर लग गया। उसने दीर्घदर्शी से एकांत में कहा—"मैं उस दिव्य सुंदरी को देखना चाहता हूँ, वरना मेरा जीवित रहना असंभव है। तुम मुझे मत रोको। इस बीच मेरे राज्य की जिम्मेदारी तुम पर ही होगी। तुम मुझे समझाने की कोशिश न करो।" ये शब्द कहकर राजा ने मंत्री को अपने घर भेज दिया।

तभी वह सुंदरी वृक्ष के साथ समुद्र जल में डूब गयी। राजा भी समुद्र में कूद पड़ा।

समुद्री तल में राजा को एक महा नगर दिखाई दिया। वहाँ पर राजा ने एक विशाल महल को देखा और उसमें प्रवेश किया। महल के एक कमरे में एक सुंदर शय्या पर दिव्य सुंदरी लेटी हुई थी।

राजा को देखते ही वह दिव्य सुंदरी बोली—"आप कौन हैं? इस रसातल में कैसे आये? आपका वेश तपस्वी का-सा है, मगर आकृति राजा की है।"

"हे सुंदरी! मैं अंगदेश का राजा यश:केतु हूँ। मैंने तुम्हारे बारे में एक मित्र के मुँह से सुना, तुम्हारे वास्ते मैं अपना राज्य त्याग संन्यासी का वेष धरकर यहाँ पहुँचा। तुम कौन हो?" राजा ने पूछा।

"मैं मृगांकसेन नामक एक विद्याधर की पुत्री हूँ। मेरा नाम मृगांकवती है। मेरे पिता मुझे यहाँ पर अकेली छोड़ चले गये हैं। मैं यहाँ के कल्पवृक्ष पर चढ़कर जब तब समुद्र पर आया-जाया करती हूँ।" सुंदरी ने उत्तर दिया।

इसके बाद राजा ने अपनी चिकनी-चुपड़ी बातों से उस सुंदरी के दिल को पिघला दिया और उसे अपनी पत्नी बनने को राजी किया। उसने एक शर्त पर राजा की पत्नी बनने की सम्मति देते हुए

दूसरे दिन यश:केतु तपस्वी का वेश धरकर राजमहल से चल पड़ा। राजा समुद्री तट पर पहुँचा। वहाँ पर लक्ष्मीदत्त नामक व्यापारी के साथ राजा का परिचय हुआ। लक्ष्मीदत्त सुवर्ण द्वीप जा रहा था, इसलिए वह राजा को भी अपने साथ ले गया।

नौका जब समुद्र के बीच पहुँची तब समुद्र-जल से एक वृक्ष ऊपर उठा। उस पर एक वीणाधारिणी दिव्य सुंदरी राजा को दिखाई दी। उस सुंदरी को देखते ही राजा सोचने लगा—"हे समुद्र! इस दिव्य सुंदरी को छिपाकर तुमने विष्णु को लक्ष्मी को दिखाकर उन्हें धोखा दिया।"

कहा–"मैं हर मास दो अष्टमी और दो चतुर्दशी के दिन तुम्हारे अधीन में न रह सकूँगी। वे चार दिन मैं कहीं चली जाऊँगी, पर तुम्हें मुझे यह पूछना नहीं चाहिये कि मैं कहाँ जाती हूँ।"

राजा ने सुंदरी की इस शर्त को मान लिया। तब वे दोनों पति-पत्नी के रूप में अपने दिन बिताने लगे। एक दिन मृगांकवती ने राजा से कहा–"मैं एक ज़रूरी काम से कहीं जा रही हूँ। मेरे लौटने तक तुम यहीं रहो। मगर यहाँ के कुएँ में भूल से भी मत उतरो। उतरोगे तो भूलोक में चले जाओगे।" इस प्रकार राजा को चेतावनी देकर वह चली गयी।

राजा ने यह जानना चाहा कि वह कहाँ जा रही है, इसलिए वह भी उस सुंदरी के पीछे चल पड़ा। उसके देखते-देखते एक ब्रह्मराक्षस ने आकर मृगांकवती को निगल डाला। राजा ने क्रुद्ध होकर अपनी तलवार से राक्षस को मार डाला। तभी राक्षस के शरीर को चीरकर मृगांकवती बाहर आयी। उसे अपने निज रूप में देख राजा ने पूछा–"प्रेयसी, क्या मैं स्वप्न देख रहा हूँ या यह कोई माया है?"

"यह न कोई स्वप्न है और न माया ही। यह तो मेरे पिता का शाप है। मेरे पिता मेरे बिना भोजन नहीं करते थे। मैं हर चतुर्दशी और अष्टमी के दिन शिव की पूजा करने जाती थी। एक चतुर्दशी के दिन गौरी की पूजा करते मैंने सारा दिन बिताया। मेरे पिताजी ने मेरी प्रतीक्षा करते एक बूँद पानी तक न पिया। इस पर नाराज़ होकर उन्होंने मुझे शाप दिया कि हर अष्टमी और चतुर्दशी के दिन मुझे यह राक्षस निगल डालेगा और मुझे उसके पेट को चीरकर बाहर निकलना होगा। उन्होंने यह भी कहा था कि उस राक्षस को यदि कोई मार डाले तो मेरे शाप का विमोचन होगा और मुझे अपनी सभी पूर्व विद्याएँ प्राप्त होंगी। अब मेरे शाप का विमोचन हो गया है, अब तुम

अपने रास्ते जाओ, मैं अपने पिता के पास जाती हूँ।" मृगांकवती ने कहा।

मृगांकवती की बातें सुनने पर राजा का दुखउमड़ पड़ा। उसने मृगांकवती से अपने साथ एक सप्ताह बिताने की याचना की। उसने मान लिया। छे दिन तक दोनों ने उस प्रदेश में विहार किया। सातवें दिन राजा मृगांकवती को कुएँ के पास ले आया। उसके साथ आलिंगन कर कुएँ में कूद पड़ा। इसके बाद वे दोनों यश:केतु के नगर के एक कुएँ में तिर आये। भूलोक में पहुँचते ही मृगांकवती का विद्याधरत्व जाता रहा और वह एक मानवी बन गयी। राजा के प्रसन्नता की सीमा न रही।

इन घटनाओं को अपनी आँखों से दीर्घदर्शी ने देख लिया। इसलिए उसके दिल की धड़कन बन्द होने के कारण उसकी मृत्यु हो गयी।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन्, दीर्घदर्शी की मृत्यु क्यों हो गयी? क्या इसलिए कि राजा ने लौटकर उसके हाथ से राज्य वापस ले लिया है? या इसलिए कि वह जिस दिव्य सुंदरी को देखकर उसके साथ विवाह नहीं कर सका और राजा ने विवाह कर लिया? इन प्रश्नों का समाधान जानकर भी न दोगे, तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"दीर्घदर्शी की मृत्यु के कारण ये दोनों नहीं हैं। इस कारण से मंत्री के दिल की धड़कन बंद हो गयी कि साधारण सुख-भोगों में निमग्न रहते समय ही राजा ने राज्य का भार उसके कंधों पर डाल दिया था और उसे दोषी ठहराने का कारण भूत बना, तो क्या विद्याधर सुंदरी के प्राप्त होने पर राजा पुन: राज्य का भार ग्रहण करेंगे? और क्या उसे ज़िंदगी भर निंदा और अपमान को सहन करना पड़ेगा? इस विचार से दीर्घदर्शी अकाल मृत्यु का शिकार हो गया!"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा।

जीत मेरी

अरब देश के एक गाँव में अली मुहम्मद नामक एक गृहस्थ था। स्वभाव से वह बड़ा भलमानस था। वह कभी किसी को कष्ट न देता, इसलिए लोग उसे भोला व्यक्ति समझते थे।

एक दिन उसके दो मित्र अली से मिलने उसके घर आये। बातों के सिलसिले में बताया कि भूत और प्रेतों से हम डरते हैं। अली मुहम्मद ने समझाया कि भूत-प्रेत बिलकुल नहीं होते, यह तो लोगों का भ्रम है। इस पर अली के दोस्तों ने समझाया कि गाँव के पश्चिमी पहाड़ पर पाकर के पेड़ में भूत-प्रेत निवास करते हैं।

"यह सब झूठ है।" अली ने कहा।

"तुम्हारे झूठ कहने से क्या होता है? क्या तुम अमावास्या की रात्रि को घने अन्धेरे में उस पेड़ के नीचे बिता सकते हो?" दोनों मित्रों ने पूछा।

"मुझे कोई आपत्ति नहीं, मैं बिता सकता हूँ।" अली ने कहा।

"तब तो कल ही अमावास्या है। कल रात को घने अन्धेरे में पहाड़ पर के पाकर पेड़ के नीचे बिताओगे तो तुम्हें हम बढ़िया दावत देंगे, नहीं तो तुम्हें दावत देनी होगी।" अली के दोस्तों ने कहा। इस शर्त को अली ने मान लिया।

दूसरे दिन शाम को तीनों मित्र खच्चरों पर सवार हो पहाड़ पर चले गये। अंधेरे के फैलते ही अली को पाकर के नीचे छोड़ उसके मित्र गाँव को लौटने को हुए। लौटते वक़्त मित्रों ने अली से कहा—"तुमको हमारी शर्तों का पूरा पालन करना होगा। कल सुबह हम तुम्हें ले जाने के लिए यहाँ पर आ पहुँचेंगे। तब तक यदि तुम ज़िंदा रहोगे तो हम लोग मिलेंगे!

काली चरण
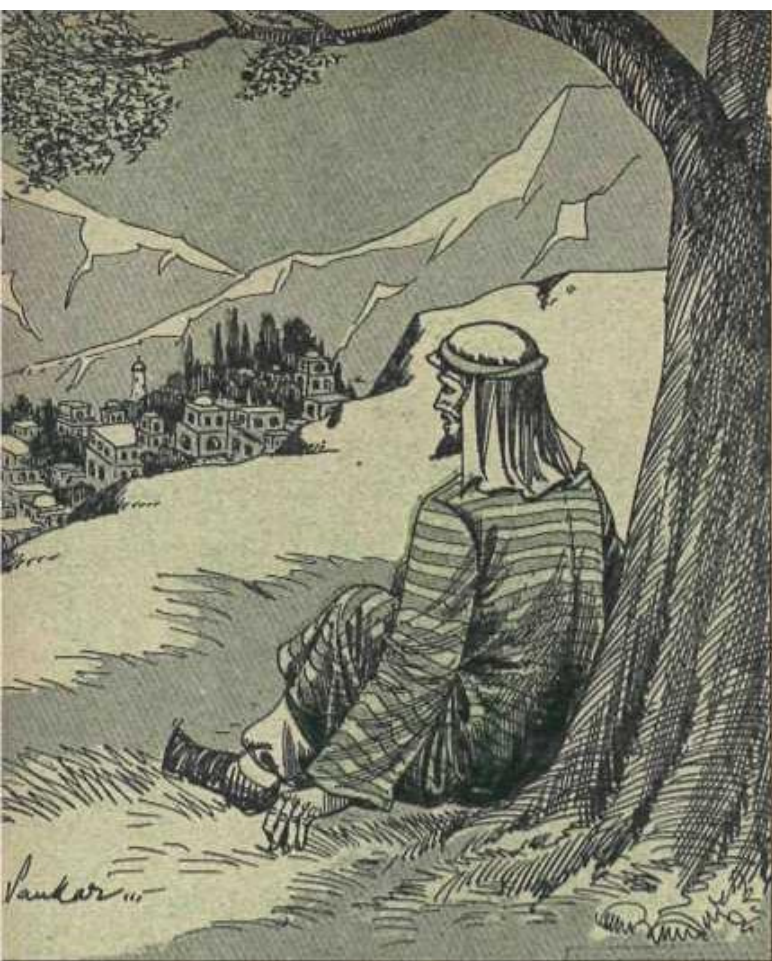
ठीक है न?" ये शब्द कहते हँसते हुए अली के दोस्त चले गये।

गाँव पहाड़ के पीछे बसा था, इसलिए तब तक गाँव में अंधेरा फैल चुका था। धीरे धीरे प्रत्येक घर में दीपक जलने लगे। थोड़ी देर में सर्दी शुरू हो गयी।

अली मुहम्मद को सर्दी के साथ भूख भी सताने लगी। अली ने सोचा–"भूख और सर्दी की पीड़ा के सामने भूतों की पीड़ा क्या ज़बर्दस्त होगी? सुबह दाँव जीत लूँगा तो तीनों का खाना अकेले खा जाऊँगा।"

ज्यों-ज्यों रात गहरी होती गयी, त्यों-त्यों हर एक घर के दीप बुझने लगे। आखिर एक महल के कमरे में बत्ती के जलते अली ने देखा। अली यह सोचते हुए कि उस कमरे में कौन जागता है और क्यों जागता है, अपनी भूख और सर्दी को भुलाने की कोशिश करने लगा।

न मालूम क्यों, उस कमरे में एक दीप रातभर जलता ही रहा।

जैसे-तैसे रात बीत गयी। सवेरे अली के दोस्त खच्चरों पर पहाड़ पर आ पहुँचे।

"दोस्तो! भूख सता रही है। मैं दाँव जीत गया हूँ। इसलिए मुझे जल्दी दावत का इंतज़ाम कर दो।" अली ने अपने दोस्तों से कहा।

"थोड़ा सब्र करो। हमने जो शर्तें रखीं, उन सब का तुमने पालन किया हो तो हम समझेंगे कि हम हार गये हैं। वरना तुम्हें मानना पड़ेगा कि तुम हार गये हो।" दोस्तों ने समझाया।

"अरे, यह तुम लोग क्या कहते हो? मैंने सारी रात पाकर के पेड़ के नीचे बिता दी। मुझे और किन शर्तों का पालन करना था?" अली ने अचरज में आकर पूछा।

"क्या तुमने सारी रात गाढ़े अंधेरे में ही बिता दी?" दोस्तों ने पूछा।

"अरे, मेरे पास दिया भी तो न था।" अली ने मित्रों की ओर शंका के साथ देखते हुए जवाब दिया।

"तुम्हारे पास न रहा तो क्या हुआ? गाँव के महल के एक कमरे में रात-भर मोमबत्ती जलती रही। क्या उसकी रोशनी तुम्हें दिखाई नहीं दी?" दोस्तों ने पूछा।

अली ने विस्मय के साथ कहा–"हाँ, तुम लोगों का कहना सच है।"

"फिर क्या? तुम हार गये! अब तुम्हें दावत देनी होगी।" दोस्तों ने कहा।

"कहीं एक मील दूरी पर किसीने मोमबत्ती जलायी तो क्या उसकी रोशनी मेरे लिए मददगार हो सकती है?" अली ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"चाहे वह एक मील की दूरी पर हो या दो मील की दूरी पर? लेकिन जब उसकी रोशनी तुम्हें सारी रात दिखाई देती थी तो हम यह कैसे माने कि तुम सारी रात अंधेरे में थे?" मित्रों ने कहा।

अली के यह समझते देर न लगी कि धोखा देने के लिए उन लोगों ने सारी रात मोमबत्ती जला रखी, इस पर अली ने कहा–"अच्छी बात है। तुम लोग कहते हो कि मैं दाँव में हार गया हूँ। इसलिए वक़्त पर मेरे घर दावत खाने आ जाओ।"

अली के मित्रों ने सोचा कि वे अपने भोले मित्र को धोखा देकर दावत उड़ाने जा रहे हैं और ख़ुशी-ख़ुशी अपने घर चले गये। फिर भोजन के वक़्त वे दोनों

अली के घर पहुँचे। तब तक अली ने भर पेट खाना खा लिया था। अली ने अपने दोस्तों का प्रसन्नता के साथ स्वागत किया और गपशप करने लगा।

बड़ी देर तक बातचीत चलती रही, तब एक ने पूछा–"अली, क्या रसोई अभी तक नहीं बनी?"

अली झट भीतर चला गया। थोड़ी देर बाद लौट कर बोला–"अभी बनी नही है।" फिर बातचीत शुरू हो गयी। थोड़ी देर बाद अली भीतर गया, लौट कर बोला–"रसोई बन रही है।"

दुपहर हो गयी थी। अली के दोस्त भूख से परेशान हो रहे थे। अली बार बार

भीतर चला जाता और लौटकर यही कहता– "रसोई बन रही है, अभी तैयार हो जायगी ।" लेकिन उसने यह नहीं कहा कि आखिर कब तक बन कर तैयार हो जायगी ।

आख़िर अली के दोस्तों में से एक ने पूछा–"देरी तो हो ही गयी, लेकिन अच्छे-अच्छे पदार्थ तैयार करा रहे हो न?"

अली ने तरह-तरह के मांस और तरकारियों की एक लंबी फेहरिस्त सुनायी । मेहमान उन चीज़ों के नाम सुनकर बहुत खुश हो गये । बातचीत चालू थी । तीसरा पहर भी समाप्त होने को था । अली एक बार भीतर हो आया और बोला–"लो, अभी अभी बन कर तैयार हो जायगी ।"

अली के दोस्तों से रहा न गया । वे बोल उठे–"अरे भाई, तुम हमारे लिए जो रसोई बनवा रहे हो, हमें ज़रा दिखा दे तो सही, वरना हमें संतोष न होगा ।"

"मेरी बातों पर यक़ीन नहीं करते हो तो तुम लोग खुद जाकर देख तो लो ।" इन शब्दों के साथ अली अपने दोस्तों को रसोई घर में ले गया । रसोई घर में चूल्हे पर एक भारी बर्तन में मांस और तरकारियाँ भरी ज़रूर थीं, मगर बर्तन के नीचे न लकड़ियाँ थीं और न अंगारे ही । सिर्फ़ एक मोमबत्ती जल रही थी ।

"अरे, तुम मोमबत्ती से रसोई बनवा रहे थे? यह रसोई कब बनेगी और हम कब खाना खायेंगे? यह तो दगा है, फ़रेब है ।" अली के दोस्त चिल्ला पड़े ।

"दोस्तो! तुम्हारी बातें तो मुझे अचरज में डाल रही हैं । एक मील की दूरी से घने अंधकार को भगाने वाली मोमबत्ती क्या दो आदमियों की रसोई नहीं बना सकती? मेरा भोजन तो समाप्त हो चुका है, इसलिए मुझे कोई जल्दी नहीं है । तुम भी ज़रा सब्र करोगे तो तुम्हें बढ़िया दावत मिल जायगी ।" अली ने समझाया ।

ये बातें सुन कर अली के दोस्त शर्मिंदा हो गये और अपने रास्ते चले गये । तब उन्हें मालूम हुआ कि अली मुहम्मद भोला-भाला आदमी नहीं है ।

व्यावहारिक ज्ञान

एक गाँव में चार युवक थे। वे सब बचपन के मित्र थे। उनमें से तीन युवकों ने एक पंडित के यहाँ तीन प्रकार की शिक्षाएँ प्राप्त कीं।

चौथा युवक प्रयत्न करके भी किसी भी प्रकार के शास्त्र का अध्ययन नहीं कर पाया, पर उसमें व्यावहारिक ज्ञान की कमी न थी।

कुछ समय बाद तीनों शिक्षित युवक देशाटन पर निकल पड़े। उनका विचार था कि अनेक देशों के राजाओं के सामने अपनी अपनी विद्याओं का प्रदर्शन कर धन कमाया जाय।

उनके साथ चौथा मित्र भी चल पड़ा। एक अशिक्षित को अपने साथ ले जाना बाक़ी तीनों मित्रों के लिए खटकता था। इसलिए उन लोगों ने चौथे मित्र से कहा–"अरे भाई, तुम हमारे साथ चल कर क्या लाभ उठाओगे? उल्टे तुम्हारा अपमान ही होगा। हम अपनी विद्याओं का प्रदर्शन कर राजदरबारों में बड़ी आसानी से कोई न कोई नौकरी पा लेंगे। तुम्हें क़ौन राजा आश्रय देगा? हम मानते हैं कि तुम थोड़ा-बहुत लौकिक ज्ञान रखते हो। लेकिन राजदरबारों में तुम्हारे जैसा लौकिक ज्ञान न रखनेवाला ही कौन होता है? इसलिए तुम चुपचाप घर लौट जाओ।"

चौथे ने अपने मित्रों से गिड़गिड़ाते हुए कहा–"भाइयो, मुझे भी अपने साथ ले चलो। हम लोग बचपन से ही मित्र रहे हैं। मुझे राजा का आश्रय न मिला तो क्या हुआ? मुझे दुख न होगा, लेकिन राजदरबारों में तुम लोगों का सत्कार होते देख मैं खुश हो जाऊंगा।"

जब तीनों मित्रों को मालूम हुआ कि चौथा उनका पीछा न छोड़ेगा, तब उसे भी अपने साथ ले लिया।

बलवीर सिंह

थोड़ी दूर की यात्रा के बाद रास्ते में एक घना जंगल आ पड़ा। वहाँ पर उन लोगों ने हड्डियों का एक ढेर देखा। तब उनमें से एक पंडित ने कहा–"ये हड्डियाँ तो एक सिंह की हैं। मैं इन सब को जोड़ कर एक कंकाल बना सकता हूँ।" इन शब्दों के साथ उसने सिंह का कंकाल बनाया।

दूसरे ने कहा–"मैं अपने मंत्र की महिमा के द्वारा इस कंकाल में चर्म, मांस-पेशियाँ और खून दौड़ा सकता हूँ।" यह कहकर उसने अपनी विद्या का प्रयोग करके सिंह के कंकाल को कलेवर का रूप दिया।

तब तीसरे ने आगे बढ़कर कहा–"तुम दोनों से बढ़कर उत्तम विद्या का मैं प्रदर्शन कर सकता हूँ। इसे देख तुम लोग चकित रह जाओगे! मैं इस सिंह के कलेवर में प्राण फूंक सकता हूँ।"

यह बात सुनते ही चौथा युवक घबरा गया और तीसरे पंडित से मिन्नत करते हुए बोला–"भाई, इस कलेवर में प्राण मत फूँको। सिंह खूँख्वार जानवर है। उसमें प्राण फूँकने से हमारे प्राणों के लिए ही ख़तरा पैदा हो सकता है! इसलिए मेरी बात मान जाओ।"

तीसरा पंडित जो थोड़ा सा भी व्यावहारिक ज्ञान न रखता था, खीझ कर बोला–"मैं जो विद्या जानता हूँ, मौक़े पर उसका प्रयोग करने से तुम रोड़े अटकाते हो? मैंने बड़ी कठिनाइयों के साथ जो विद्या प्राप्त की, वह और किस काम की?"

"अच्छी बात है! तुम जैसा करना चाहो करो, पर मुझे पहले पेड़ पर चढ़ने दो!" इन शब्दों के साथ चौथा व्यक्ति निकट के पेड़ पर जा बैठा।

तीसरे पंडित ने अपने मंत्र का प्रयोग करके सिंह के कलेवर में प्राण फूँका। दूसरे ही क्षण सिंह गरज कर उन तीनों मित्रों पर टूट पड़ा और उन्हें मार डाला।

लोभ का फल

एक गाँव के मंदिर में एक गरीब पुजारी था। उसके मन में धन कमाने का लोभ पैदा हुआ। लोगों से धन लूटने के लिए उसने एक उपाय सोचा। इस उपाय के सूझते ही पुजारी मंदिर में जाना छोड़ घर पर ही रहने लगा। तब गाँव के बुजुर्गों ने पुजारी के पास जाकर पूछा कि वह मंदिर के दर्वाजे क्यों नहीं खोलता।

पुजारी ने दीनता भरे स्वर में कहा–"भाइयो, मैं क्या बताऊँ, कल रात को रामचन्द्र जी ने सपने में दर्शन देकर मुझसे कहा–"हे भक्तवर, तुम परम दरिद्र हो, इसलिए मैं इस मंदिर में रहना नहीं चाहता।" इस पर मैंने उनसे निवेदन किया–"भगवन, आप मेरे कारण इस मंदिर को छोड़ कहीं न जाइयेगा, गाँव के बुजुर्ग जरूर मेरी दरिद्रता को दूर करेंगे।"

पुजारी की ये बातें सुनने पर गाँववालों ने परस्पर विचार-विनिमय करके यह निर्णय किया कि इस पुजारी को मंदिर में भेजने पर भगवान नाराज हो जायेंगे, इसलिए इसकी जगह एक धनी पुजारी को नियुक्त करना चाहिये। इस निर्णय के अनुसार दूसरे ही दिन गरीब पुजारी की जगह अमीर पुजारी को नियुक्त किया गया।

पुजारी अपनी कुटिल चाल की वजह से नौकरी से हाथ धो बैठा।

खलीफ़ा का सपना

बगदाद नगर पर खलीफ़ा हारूनल शासन करता था। वह एक बार मक्का की यात्रा करके लौट आया। उसी रात को उसने एक अनोखा सपना देखा। सपने में खलीफ़ा को दो पैगंबर दिखाई दिये। वे दोनों आपस में यों बात कर रहे थे।

"इस साल हज करने कितने यात्री मक्का गये?" एक पैगंबर ने पूछा।

"दस लाख लोग।" दूसरे पैगंबर ने जवाब दिया।

"उनमें से कितने लोगों की यात्रा सफल हुई?" पहले पैगंबर ने फिर पूछा।

"उनमें किसी की यात्रा सफल न हुई। एक की यात्रा खुदा के लिए प्यारी रही।" दूसरे पैगंबर ने जवाब दिया।

"दस लाख लोगों को प्राप्त हो सकने वाला वह पुण्य पाने वाला पुण्यात्मा कौन है? वह कहाँ रहता है?" पहले पैगंबर ने फिर पूछा।

"उसका नाम इस्माइल है। वह बस्त्रा नगर की हारूनल मिया गली में रहता है।" दूसरे पैगंबर ने जवाब दिया।

तुरंत खलीफ़ा जाग पड़ा। उसे लगा कि पैगंबर ने जिस पुण्यात्मा का नाम लिया, उसके दर्शन करने चाहिए।

दूसरे दिन खलीफ़ा एक मामूली आदमी का वेष धरकर बस्त्रा नगर की ओर चल पड़ा। खलीफ़ा ने हरूनलमिया गली में पहुँचकर एक आदमी से पूछा—"भाई साहब, इस्माइल का घर कहाँ है?"

उस आदमी ने खलीफ़ा की ओर आश्चर्य के साथ देखा और कहा—"इस्माइल का घर इस गली के छोर पर है।"

गली के छोर पर खलीफ़ा को एक छोटी-सी झोंपड़ी दिखाई दी। झोंपड़ी के सामने चबूतरे पर बैठे अधेड़ उम्र का एक आदमी जूते सी रहा था।

विमला सराफ़

"इस्माइल का घर कहाँ, भाई?" खलीफ़ा ने उस आदमी से पूछा।

"मेरा ही नाम इस्माइल है। आप कौन हैं? क्या आपके लिए जूते बनाने हैं?" उस आदमी ने खलीफ़ा से पूछा।

उसके मुँह से यह बात सुनकर खलीफ़ा चकित रह गया। उसे इस बात पर यक़ीन न हुआ कि ऐसे गरीब ने मक्के की यात्रा भी की होगी।

"मैं जूते सिलवाने के लिए नहीं आया हूँ, यह बताओ कि क्या तुमने इस साल मक्के की यात्रा की?" खलीफ़ा ने पूछा।

इस्माइल ने गहरी सांस लेकर यों कहा—"साहब! मैंने मक्का की यात्रा करने का निश्चय किया और उस दिन से रोज़ एक सिक्के के हिसाब से बचाता गया। इस साल यात्रा के लिए आवश्यक धन जमा हो गया। मगर ख़ुदा की मर्ज़ी कुछ और थी। यात्रा पर चलने के एक दिन पहले मेरी बीबी जो उस वक़्त गर्भवती थी, बोली—"बगल के घर में माँस पका रहे हैं। हमारे माँस खाये काफ़ी दिन हो गये हैं। उन लोगों से पूछकर थोड़ा माँस ले आइये।"

मैंने उसे समझाया—"हमारा पड़ोसी रजाक हम जैसे गरीब है। वह बड़ी मुश्किल से थोड़ा माँस कहीं से लाया होगा। वह शायद उसकी बीबी और बच्चों के लिए काफ़ी न होगा। उसमें से हमारा हिस्सा माँगना ठीक न होगा।" लेकिन मेरी बीबी ने गिड़गिड़ा कर कहा—"थोड़ा ही सही, माँग लाइये। आज माँस खाने की मेरी इच्छा हो रही है।"
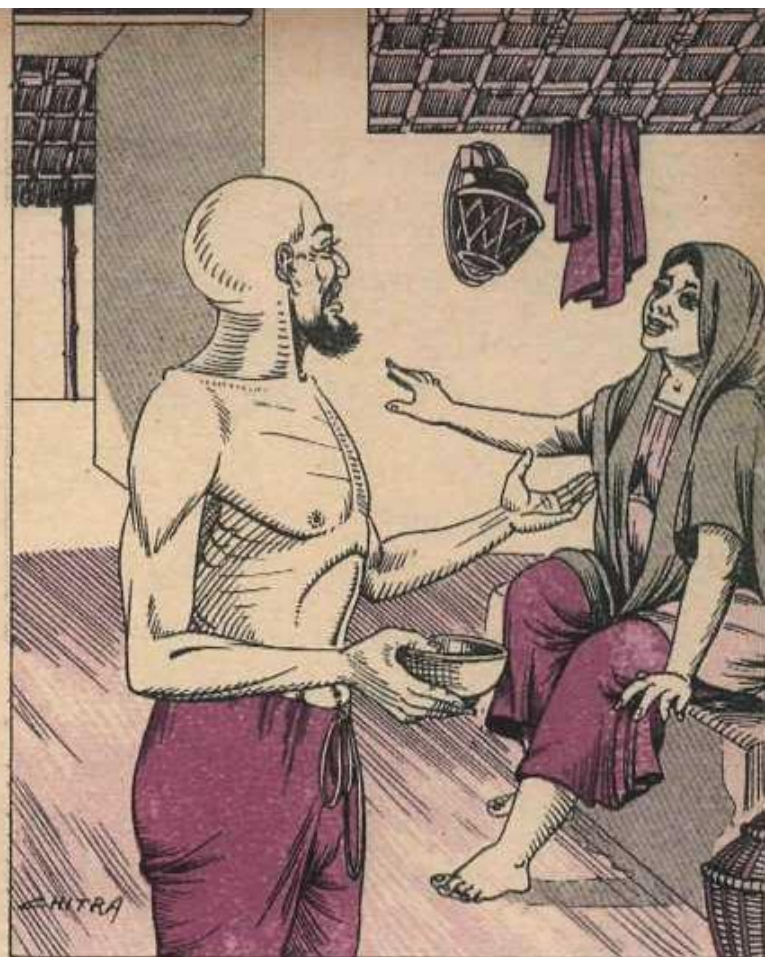
"मैं अपनी बीबी की इच्छा की पूर्ति करने के ख़्याल से एक पात्र लिये पड़ोसी घर गया और दर्वाज़ा खटखटाया। बड़ी देर बाद रजाक बाहर आया।

मैंने उससे पूछा—"रजाक साहब, मेरी बीबी सर्भवती है। उसने किसी तरह से पता लगाया कि तुम्हारे घर में माँस पका रहे हैं, मैं उसकी इच्छा की पूर्ति करने

तुम्हारे घर आया हूँ। मेहर्बानी करके थोड़ा माँस दो। इनकार मत करो।"

रजाक ने आँसू भरते हुए कहा था– "इस्माइल साहब, यह माँस हमारे खाने लायक़ है, आपके खाने लायक़ नहीं।"

"चाहे जैसे भी क्यों न हो, थोड़ा तो दे दो।" मैंने पूछा।

रजाक भारी चिंता के साथ बोला– "भाई साहब, इधर पांच दिन से मैं, मेरी बीबी और बच्चे सब फ़ाका कर रहे हैं। आज बच्चों की बुरी हालत देख मुझसे रहा नहीं गया, मैं घर से निकल पड़ा। एक जगह मुझे मरा पड़ा गधा दिखाई दिया। उसकी जाँघ में से थोड़ा माँस काट लाया हूँ। वही माँस मेरी बीबी पका रही है। हमारा कुरान यह बताता है कि जान जब खतरे में पड़ जाती है तब उचित और अनुचित का ख़्याल किये बिना ही कुछ खाकर जान बचानी है।"

"रजाक की बातें सुनने पर मेरा दुख उमड़ पड़ा। आज तक मैं यही सोचता रहा कि मुझसे बढ़कर कोई गरीब न होगा, मगर रजाक की हालत जानने पर मेरे दुख की सीमा न रही। मैं तुरंत अपने घर लौट आया, मक्के की यात्रा के लिए जो कुछ धन बचा रखा था, वह सब लाकर रजाक के हाथ दिया और उसे कोई व्यापार करके ज़िंदगी बसर करने की सलाह दी। इसलिए इस साल मैं मक्का की यात्रा नहीं कर पाया।"

उसकी सारी कहानी सुनकर खलीफ़ा ने कहा–"हे पुण्यात्मा! तुम चिंता न करो। इस साल जिन दस लाख लोगों ने मक्का की यात्रा की, उन सब का पुण्य तुम एक को मिल गया है। यह बात सपने में दर्शन देकर मुझसे पैगंबरों ने बतायी है। इसीलिए मैं तुम्हें खोजते हुए इतनी दूर आया हूँ, मैं बगदाद का शासक खलीफ़ा हूँ। मेरा नाम हारूनल रशीद है।"

ये बातें सुनकर इस्माइल चकित हो खलीफ़ा की ओर देखता ही रह गया।

पाप का मूल

एक बार एक पंडित के मन में यह संदेह पैदा हुआ कि पाप का मूल क्या है? उसने कई लोगों से इस प्रश्न का उत्तर पूछा, पर किसी ने सही समाधान न दिया। इसलिए उस पंडित ने निश्चय किया कि काशी में जाकर वहाँ के पंडितों द्वारा इसका सही उत्तर जान ले।

रास्ते में एक गाँव के बाहर उसे एक मंदिर दिखाई दिया, मंदिर के पास एक छोटी झोंपड़ी थी। झोंपड़ी में जाकर पंडित ने काशी की यात्रा का कारण बताया और रसोई बनाने के लिए जगह माँगी।

इस पर उस गरीब ने बताया–"पंडितजी, आप मंदिर के अहाते में ही रसोई बना लीजिये। आप थोड़ी देर इस मण्डप में आराम कीजिये। मैं अभी लौट कर आपकी मदद करूँगा।"

इसके चन्द मिनट बाद गरीब आदमी एक थाली में भोजन ले आया और बोला– "पंडितजी, यह भोजन मेरे घर का बना है। आप इसे खाकर मेरे व्रत की पूर्ति कीजिये। मैंने इस व्रत को पूरा करने के लिए कई सालों से एक सौ आठ सोने की गिन्नियाँ इकट्ठा कर रखी है।"

"अबे, तेरा भोजन करने से मुझे पाप लगता है।" पंडित ने कहा।

"मैं सोने की अपनी सारी गिन्नियाँ आपको दान देता हूँ।" गरीब ने समझाया।

इस पर ब्राह्मण ने चुपचाप भोजन किया। तब गरीब ने इतमीनान से कहा– "पंडितजी, आपको अब पाप का मूल मालूम हो गया है न! पाप का मूल लोभ या आशा है। अब आपको काशी जाने की ज़रूरत नहीं, अपने घर लौट जाइये।"
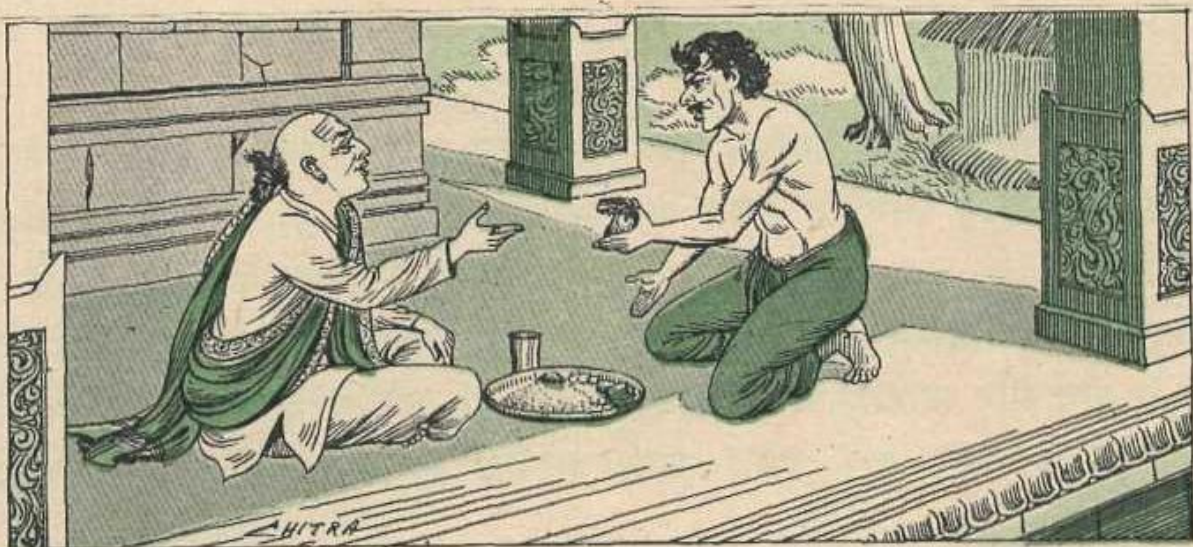
पापी कौन है?

एक गाँव में धनगुप्त नामक एक व्यापारी था। वह उचित और अनुचित सभी तरीक़ों से धन कमाकर करोड़पति बन बैठा। धनगुप्त को आदर्श बनाकर, उसकी मदद से अनेक व्यापारी भी लखपति हो गये।

धनगुप्त जब बूढ़ा हो गया और मौत ज्यों ज्यों उसके निकट आने लगी, त्यों त्यों उसे पाप का डर सताने लगा। उसने ज़िंदगी भर पाप ही पाप किये थे, अब भी सही थोड़ा-बहुत पुण्य न कमावे तो मृत्यु के बाद उसे नरक में सड़ना होगा। यह डर उसे सताने लगा। इसलिए पुण्य कमाने के लिए उसने तीर्थाटन करने का संकल्प किया।

धनगुप्त के तीर्थाटन का समाचार मिलते ही तीन और व्यापारी भी तीर्थाटन के लिए उसके साथ चल पड़े। उन लोगों ने भी कभी पुण्य का एक भी काम नहीं किया था। लेकिन वे लोग यह जानते थे कि बिना किसी प्रकार के लाभ के धनगुप्त कोई काम नहीं करता। पुण्य की बात छोड़ भी दे, तीर्थाटन से और अन्य लाभ भी हो सकते हैं। वे लाभ उन्हें क्यों नहीं पाने हैं? अलावा इसके एक साथ चार लोगों के जाने पर ख़र्च भी कम पड़ेगा। रास्ते में कोई बीमार पड़े तो बाक़ी लोग मदद करेंगे। ये सारी बातें सोचकर धनगुप्त ने उन्हें अपने साथ चलने की अनुमति दी।

पहले उनके सामने यह सवाल उठा कि काशी की यात्रा की जाय या रामेश्वरम की? काशी की यात्रा करने में काफ़ी धन ख़र्च हो जाता है, अलावा इसके काशी जाने पर लौटना दुर्लभ है, रामेश्वर तो नजदीक़ है, रास्ता भी आसान पड़ेगा।

सतीशचन्द्र त्रिवेदी

अलावा इसके उस गाँव में रामदयाल नामक एक अछूत था। वह घरवालों पर रूटकर तीन-चार बार रामेश्वरम हो आया था। रामेश्वरम का रास्ता वह बड़ी अच्छी तरह से जानता था। उसको साथ लेकर चारों व्यापारियों ने रामेश्वरम जाने का निश्चय कर लिया।

एक अच्छा मुहूर्त देखकर रामदयाल को साथ ले चारों व्यापारी राम नाम का स्मरण करते रामेश्वरम के लिए चल पड़े। यात्रा सब तरह से अनुकूल ही रही। रामेश्वरम तक पहुँचने के लिए एक-दो दिन की यात्रा अभी शेष थी, आकाश में बादल घिर आये, बिजली चमकने लगी, यात्रियों की आँखें चौंधियाने लगीं।

यात्रियों ने देखा कि पास में एक मंदिर है, वे सब दौड़ पड़े और एक उजड़े हुए मंदिर में छिप गये।

तुरंत बिजली गिरने लगी और मूसलधार वर्षा शुरू हो गयी। एक साथ भयंकर आवाज़ के साथ कई बिजलियाँ गिर गयीं। एक बिजली मंदिर के पास के एक पेड़ पर गिरी जिससे पेड़ जलकर भस्म हो गया। दूसरा पेड़ नीचे गिर गया।

थोड़ी देर बाद एक और बिजली मंदिर से पचास फ़ुट की दूरी पर गिर पड़ी जिससे सारी ज़मीन थर्रा उठी।

यात्रियों के प्राण सूख गये।

"यह कैसी वर्षा है? मैंने इस तरह बिजलियों का गिरना अपनी ज़िंदगी में

कभी नहीं देखा। मालूम होता है कि हम में कोई पापी है। उस पापी की वजह से हम सब का विनाश होने जा रहा है। लगता है कि हमारे अंतिम दिन निकट आ गये हैं। अब हमारा बचना संभव नहीं है।" धनगुप्त ने कहा।

बाक़ी तीनों व्यापारियों ने परस्पर एक दूसरे के चेहरे को देखा और कहा–"यह रामदयाल ही पापी है! यह तो हमारी भूल थी कि हम इस अछूत को अपने साथ ले आये। साथ लाये भी हों, लेकिन यह भी हमारे साथ आकर इस पवित्र मंदिर में आ बैठा है। भगवान हम पर नाराज़ हो गये हैं। इसे मंदिर से तुरंत बाहर भेज देना चाहिये।"

तब चारों व्यापारियों ने एक स्वर में रामदयाल को मंदिर से बाहर जाने का आदेश दे दिया।

"बाबू साहब! ज़ोर की वर्षा हो रही है, मेहर्बानी कीजियेगा। आपका पुण्य होगा। मैं मानता हूँ कि मैं पापी हूँ, लेकिन आप जैसे पुण्यात्माओं के संग रहने से भगवान मुझे क्षमा करेंगे। मुझ अकेले की वजह से क्या आप चारों का विनाश होगा? भगवान कभी ऐसा अन्याय नहीं करेंगे।" रामदयाल ने व्यापारियों से बिनती की।

रामदयाल सर्दी में ठिठुरते प्रणाम करते गिड़गिड़ाता रहा, लेकिन यात्रियों का डाँटना भी बढ़ता गया। आखिर उन चारों ने मिलकर रामदयाल को मंदिर के बाहर वर्षा में खदेड़ दिया।

रामदयाल दौड़कर दूर के एक पेड़ के नीचे जा खड़ा हुआ। दूसरे ही क्षण एक कड़कती आवाज़ हुई। बिजली कौंध गयी। रामदयाल ने ज़ोर से आँखें मूँद लीं, जब उसने आँखें खोलीं, देखता क्या है, मंदिर की जगह पत्थरों का ढेर है, मलबा है।

धनगुप्त और उसके अनुचर बिजली के गिरने से मंदिर के साथ दबकर मर गये थे।

अधन्नी का राजा

पाटलीपुत्र में एक गरीब भिश्ती था, वह पानी ढोकर अपने दिन गुज़ार देता था। उसकी झोंपड़ी नगर के उत्तरी दर्वाज़े के पास बनी थी।

उस नगर के दक्षिणी दर्वाज़े के पास एक औरत रहा करती थी, वह भी पानी ढोकर अपने दिन काटती थी। इन दोनों के बीच स्नेह पैदा हुआ और बाद को इनकी शादी भी हो गयी।

शादी के बाद भी दोनों नगर के अलग छोरों पर काम करते थे, इसलिए अक्सर दोनों का मिलना न होता था। उन्हीं दिनों में एक त्यौहार आया। भिश्ती ने उस दिन जल्दी-जल्दी अपना काम पूरा किया और दक्षिणी दर्वाज़े के पास रहनेवाली अपनी पत्नी को देखने गया।

"आज तो त्यौहार का दिन है। सब लोग त्यौहार मना रहे हैं। हमें भी तो मनाना है। मेरे पास एक अधन्नी है, तुम्हारे पास कितने पैसे हैं?" पत्नी ने अपनी अधन्नी दिखाते हुए पति से पूछा।

"मेरे पास भी एक अधन्नी है। मैंने उसे उत्तरी दर्वाज़े के पास एक दीवार में ईंटों के बीच छिपा रखा है। मगर एक आने से हम अपना त्यौहार कैसे मनायेंगे?" पति ने कहा।

"एक पैसे के फूल खरीदेंगे, एक पैसे का चंदन लेंगे। बाक़ी अधन्नी से खीर बनाकर खा लेंगे।" पत्नी ने सलाह दी।

यह बात सुनकर भिश्ती ख़ुशी से फूल उठा। वह अपनी पत्नी के साथ त्यौहार मनाने जा रहा है, इस ख़ुशी में वह अपनी सुध-बुध खो बैठा।

"तुम यहीं रह जाओ। मैं अभी उत्तरी दर्वाज़े के पास जाकर अपनी अधन्नी ले आता हूँ।" ये बातें कहकर वह दक्षिणी

दर्वाज़े से उत्तरी द्वार की ओर चल पड़ा। कड़ी दुपहरी थी। नीचे रेतीला रास्ता था। लेकिन उस ख़ुशी में भिश्ती को धूप का ख्याल न रहा। वह बड़े ही उत्साह के साथ उछलते-गाते उत्तरी द्वार की ओर चला जा रहा था।

दोनों द्वारों के बीच रास्ते में राजा का महल पड़ता था। धूप का ख्याल किये बिना जेठ में नंगे पाव गीत गाते चलनेवाले भिश्ती पर राजा की नज़र पड़ी।

राजा को उसका रवैया देख आश्चर्य हुआ। राजा के मन में यह इच्छा पैदा हुई कि भिश्ती की ख़ुशी का कारण तो जान ले। राजा ने अपने सेवकों को आदेश दिया-"रास्ते पर गाते हुए चलनेवाले उस आदमी को मेरे पास लेते लाओ।" सेवकों ने भिश्ती के पास जाकर कहा- "अबे, तुमको राजा साहब बुला रहे हैं, हमारे साथ चलो।"

"मुझे राजा से क्या काम? मैं तो उनको जानता तक नहीं।" ये शब्द कहते भिश्ती अपने रास्ते चलने को हुआ।

इस पर राजा के सेवक जबर्दस्ती उसे पकड़कर राजा के पास खींच ले गये।

राजा ने भिश्ती को देख पूछा-"अबे, सर और पैर धूप से तप रहे हैं, तुम उनकी परवाह किये बिना इस कड़ी दुपहरी में कहाँ जा रहे हो?"

"सरकार, मेरे दिल में इससे ज़्यादा गरम इच्छा है। इसलिए मुझे इस बाहरी

धूप का बिलकुल पता नहीं चल रहा है।" भिश्ती ने जवाब दिया।

राजा ने सोचा कि वह न मालूम कैसी बड़ी इच्छा होगी, आखिर पूछ बैठा–"बताओ, वह कैसी इच्छा है?"

"महाराज, आज तो त्यौहार का दिन है। मेरी पत्नी के पास अधन्नी है। मैंने उत्तरी द्वार के पास दीवार में ईंटों के बीच एक अधन्नी बचाकर छिपा रखी है। दोनों के पैसे मिलकर एक आना हो जाता है। हम उन पैसों में से एक पैसे के फूल, एक पैसा का चंदन खरीदेंगे, बाक़ी अधन्नी का खीर बनाकर त्यौहार मनायेंगे। मुझे उत्तरी द्वार तक जाकर अपनी अधन्नी ले फिर दक्षिणी द्वार तक जाना है। तभी हम त्यौहार मनायेंगे। मेरी पत्नी मेरे इंतज़ार में बैठी होगी। इसलिए आप मुझे शीघ्र जाने दीजिये।" भिश्ती ने कहा।

ये बातें सुनकर राजा चकित हो बोला–"अबे, अब तक तुम जितनी दूर चले आये हो, उतनी दूर और चलने पर ही तुम उत्तरी द्वार तक पहुँच सकते हो। तुम इतनी मेहनत क्यों करते हो! मैं तुम्हें अधन्नी देता हूँ, तुम यहीं से अपनी पत्नी के पास लौट जाओ और त्यौहार मना लो।"

"अच्छी बात है, महाराज! आप अधन्नी दीजिये, लेकिन मैं अपनी अधन्नी भी लेते आऊँगा।" भिश्ती ने कहा।

"तुम उस अधन्नी के बारे में परेशान क्यों हो जाते हो? चाहे तो तुमको मैं

चवन्नी देता हूँ। उसे लेकर तुम दक्षिणी द्वार को लौट जाओ।" राजा ने समझाया।

"अच्छी बात है। आप चवन्नी दिला दीजिये, महाराज! मैं अपनी अधन्नी भी लेकर दक्षिणी द्वार को लौट जाऊँगा।" भिश्ती ने कहा।

इस पर राजा का जोश बढ़ गया। उसने सोचा कि भिश्ती को कितनी रक़म का लोभ दिखाने से वह अपनी अधन्नी को भूल जायगा। इस ख्याल से उसने उसे एक रुपये से लेकर एक लाख रुपये तक का सौदा किया। राजा के इस तरह बड़ी रक़म की आशा दिलाने पर भी वह अपनी अधन्नी ले जाने की अनुमति देने के लिए राजा से गिड़गिड़ाने लगा।

आखिर राजा खीझ कर बोला–"तुम यदि अपनी वह अधन्नी न लोगे तो मैं तुम्हें अभी आधे नगर का राजा बना देता हूँ! क्या कहते हो?"

"जी, महाराज! ऐसा ही कीजिये।" भिश्ती ने कहा।

तुरंत राजा ने मंत्री को बुलाकर आदेश दिया–"मंत्री महोदय, इस भिश्ती को आधे नगर का राजा बनाते हुए अभी अधिकार-पत्र तैयार करवा दो।"

मंत्री ने नगर को उत्तर और दक्षिणी भागों में बांट दिया। इसके बाद राजा ने भिश्ती से पूछा–"अबे, इस नगर के कौन-सा आधा भाग तुम चाहते हो, माँग लो! तुम जिस दिशा का आधा भाग चाहोगे, उस आधे भाग का तुमको राजा बनाते हुए मंत्री अधिकार पत्र लिखवायेंगे।"

"महाराज! मुझे उत्तरी दिशा का आधा भाग दिलवा दीजिये।" भिश्ती ने कहा। सबने यही सोचा कि उत्तरी द्वार के पास उसने जो अधन्नी छिपा रखी है, उसी के वास्ते उसने उत्तरी दिशा का हिस्सा माँग लिया है।

राजा ने अपने वचन के मुताबिक़ भिश्ती को उत्तरी नगरी का राजा बनाया, लेकिन उस दिन से लोग उसे "अधन्नी का राजा" ही पुकारा करते थे।

वंश की इज़्ज़त

बुंदेलखण्ड में एक ठाकुर था। उसे सब लोग दीवान साहब पुकारते थे। उसे खाने-पीने का ठिकाना न था, पर रईसी की सनक ज़्यादा थी। वह कोई काम-धंधा या नौकरी नहीं करता था। हमेशा अपने वंश के बड़प्पन की डींग मारते सब का वक़्त बरबाद कर देता था।

एक दिन दीवान साहब रास्ते में खड़े हो एक अमीर से बात कर रहा था, तभी दूर पर उसे एक गाड़ी दिखाई दी। गाड़ी पर अनाज के बोरे ख़ूब लदे थे जिससे वह ऊँचा दिखाई दे रहा था। वह गाड़ी उन्हीं की ओर चली आ रही थी।

गाड़ी को दूर से देख दीवान साहब बोल उठा–"वाह, वह कितना बड़ा हाथी है। मेरे दादा के पास ठीक ऐसा ही एक हाथी था।"

"दीवान साहब! शायद आप गलत कह रहे हैं। वह हाथी नहीं, अनाज के बोरों से लदी गाड़ी है।" अमीर ने कहा।

"अमीर साहब, शायद आपको चालीसी आ गयी है। हाथी तो साफ़ दिखाई दे रहा है!" दीवान साहब ने कहा।

"माफ़ कीजियेगा, दीवान साहब! वह हाथी नहीं है, अनाज़ के बोरोंवाली गाड़ी ही है।" अमीर ने स्पष्ठ शब्दों में कहा।

इस पर दीवान साहब तैश में आ गये और बोले–"वह हाथी हो तो मैं तुम्हारा सर काट दूँगा। गाड़ी हो तो तुम मेरा सर काट दो! यही हम दोनों के बीच शर्त रही।" ये शब्द कहते मूँछों पर ताव देते दीवान साहब तनकर खड़ा हो गया।

थोड़ी देर में गाड़ी निकट आ गयी।

"दीवान साहब! देखते हैं न! आप हार गये।" अमीर ने कहा।

बुंदेलखण्डी लोक कथा
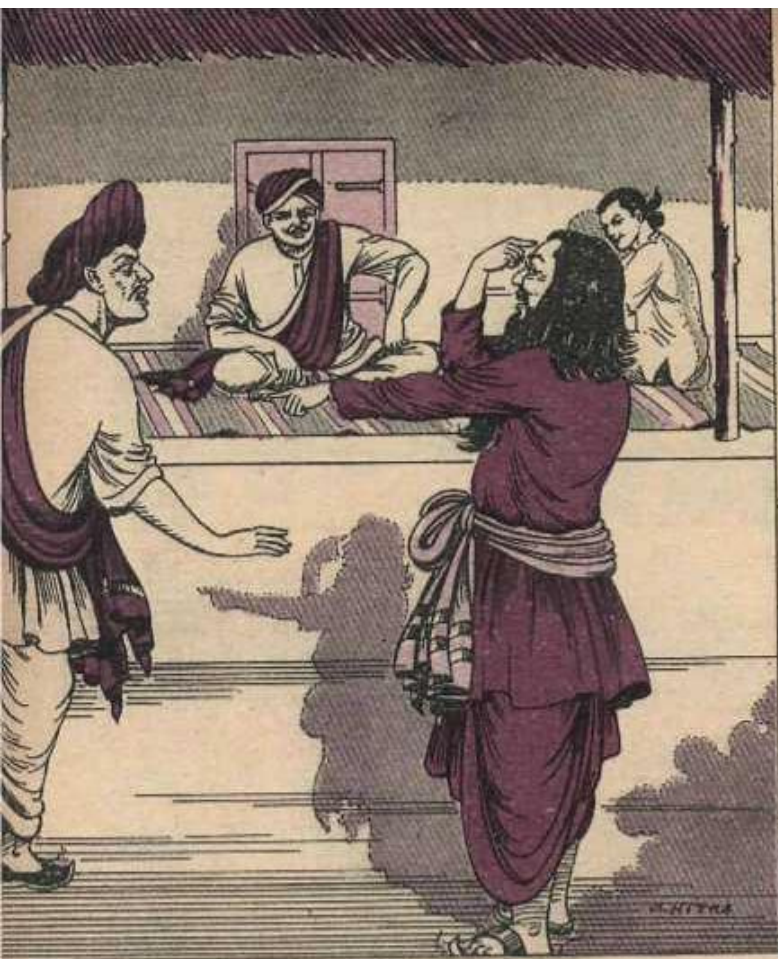
"हाँ, मैं हार गया। मेरा सर काट दो।" दीवान साहब ने कहा।

"कोई बात नहीं, जाने दीजिये।" अमीर ने इस आशा से ये बातें कहीं कि ठाकुर भविष्य में डींग मारना छोड़ देंगे।

"ऐसा कभी नहीं हो सकता! शर्त के मुताबिक़ तुम्हें मेरा सर काटना ही होगा। ठाकुर के वंशज अपनी बात के पक्के होते हैं।" दीवान साहब ने हठ किया।

"तब तो मैं सोचता हूँ कि न्यायाधीश की सलाह लेकर कुछ करना उचित होगा।" अमीर ने सुझाया।

दीवान साहब ने भी मान लिया। दोनों मिलकर न्यायाधीश के पास पहुँचे।

न्यायाधीश ने सारी बातें सुनकर यह समझ लिया कि बेचारे अमीर बुरी हालत में फँस गया है। उसने यों फ़ैसला सुनाया—"यह सच है कि दीवान साहब का सर अमीर की संपत्ति हो गया है। मगर वह अपनी इच्छा के अनुसार जब चाहे तब उसे काट सकता है। उस पर दबाव डालने का किसी को अधिकार नहीं है।"

यह फ़ैसला सुनकर अमीर ख़ुश हो गया। मगर दीवान साहब ने बखेड़ा खड़ा कर दिया—"तब तो इस क्षण से मेरे सर की रक्षा और पोषण करने का भार अमीर का ही है। इसके प्रति मेरी कोई ज़िम्मेदारी न होगी।"

अमीर ने लाचार होकर दीवान साहब के सर की रक्षा और पोषण का भार अपने ऊपर ले लिया।

मगर यह भार बड़ा क़ीमती पड़ा। दीवान साहब अपने वंश की मर्यादा के अनुरूप अमीर के द्वारा उसका पोषण कराते अमीर का घर तबाह करने लगा।

कुछ दिन बीत गये। अमीर के कई मित्रों ने सोचा कि उसके सर पर जो झंझट आ पड़ी है, उससे कैसे पिंड छुड़ा ले। आखिर उन्हें एक उपाय सूझा। उन लोगों ने अमीर को वह उपाय सुनाया।

अमीर के मित्रों ने जो योजना बनायी उसके अनुसार दूसरे दिन अमीर के घर की गली में एक आदमी चिल्लाते आया– "मैं नाक और कान ख़रीदता हूँ।"

अमीर ने उस आदमी को बुलाकर पूछा–"तुम क्या क्या ख़रीदते हो?"

"साहब, मैं 'मनुष्यों की नाक और कान ख़रीदता हूँ।" व्यापारी ने कहा।

"किस भाव में ख़रीदते हो?" अमीर ने पूछा।

"अच्छे वंश का व्यक्ति हो तो उसकी नाक और कान के पाँच सौ देता हूँ।" व्यापारी ने कहा। इस पर अमीर ने उस व्यापारी को दीवान साहब का परिचय कराते हुए कहा–"ये एक अच्छे ठाकुर वंश के हैं। इनका सर फिलहाल मेरा ही है। इसलिए तुम मुझे पांच सौ रुपये देकर इनकी नाक और कान काट लो।"

ये बातें सुनकर दीवान घबरा गया।

"अमीर साहब! यह तो मेरे प्रति बड़ा अन्याय है!" दीवान साहब चिल्ला उठा।

"अन्याय कैसे! यह सर मेरा है। मैं इसके पालन-पोषण में कितना धन खर्च करता हूँ, जानते हैं न?" अमीर गरज उठा।

"हमें न्यायाधीश के पास जाकर उनकी सलाह लेना ठीक होगा।" दीवान साहब ने सुझाया।

दोनों फिर एक बार न्यायाधीश के पास पहुँचे और न्याय का फ़ैसला करने की प्रार्थना की। दोनों की बातें सुनकर न्यायाधीश ने दीवान साहब से कहा–"अमीर साहब को आपकी नाक और कान बेचने का अधिकार ज़रूर है। यदि आप यह कहे कि उन्हें यह अधिकार नहीं है तो आज तक उन्होंने आपकी ओर से आपका सर बचाने के लिए जो कुछ खर्च किया, उसे आपको अमीर साहब को लौटाना होगा।"

यह फ़ैसला सुनने पर दीवान साहब मौन हो गया और उसने अपनी सारी जमीन-जायदाद अमीर के नाम लिखाया, तब उस गाँव को छोड़कर हमेशा के लिए कहीं चला गया।

अजीब गवाही

एक बार गाँव के मुखिये के घोड़े को कोत्वाल ने चुराया और उसकी लंबी पूंछ को काट कर अपने घर के पिछवाड़े में बांध दिया। जान-पहचान के लोगों ने जब उससे पूछा कि यह घोड़ा कहाँ खरीदा, उसने किसी दूर के गाँव का नाम बताया।

गाँव के मुखिये ने कोत्वाल के घर जाकर अपने घोड़े को पहचान लिया और न्यायाधीश के पास जाकर शिकायत की। न्यायाधीश ने मुखिये से पूछा–"क्या तुम्हारे घोड़े को कोई पहचान सकता है?" मुखिये ने जवाब दिया–"हाँ साहब, गाँव का दूकानदार अच्छी तरह से पहचानता है।"

न्यायाधीश ने दूकानदार को बुला कर पूछा–"क्या तुम मुखिये के घोड़े को जानते हो?"

झट कोत्वाल ने जवाब दिया–"साहब, क्या दूकानदार यह नहीं जानते कि मुखिये के घोड़े की पूँछ बड़ी लंबी है?"

दूकानदार बड़ी उलझन में पड़ गया। उसने एक बार घोड़े की परिक्रमा की और कहा–"साहब! आगे से देखने पर यह घोड़ा मुखिये का घोड़ा लगता है, पीछे से देखने पर यह कोत्वाल का घोड़ा मालूम होता है।"

दूकानदार की गवाही सुन कचहरी में बैठे सब लोग हँस पड़े। न्यायाधीश ने फ़ैसला किया कि वह घोड़ा मुखिये का ही है।
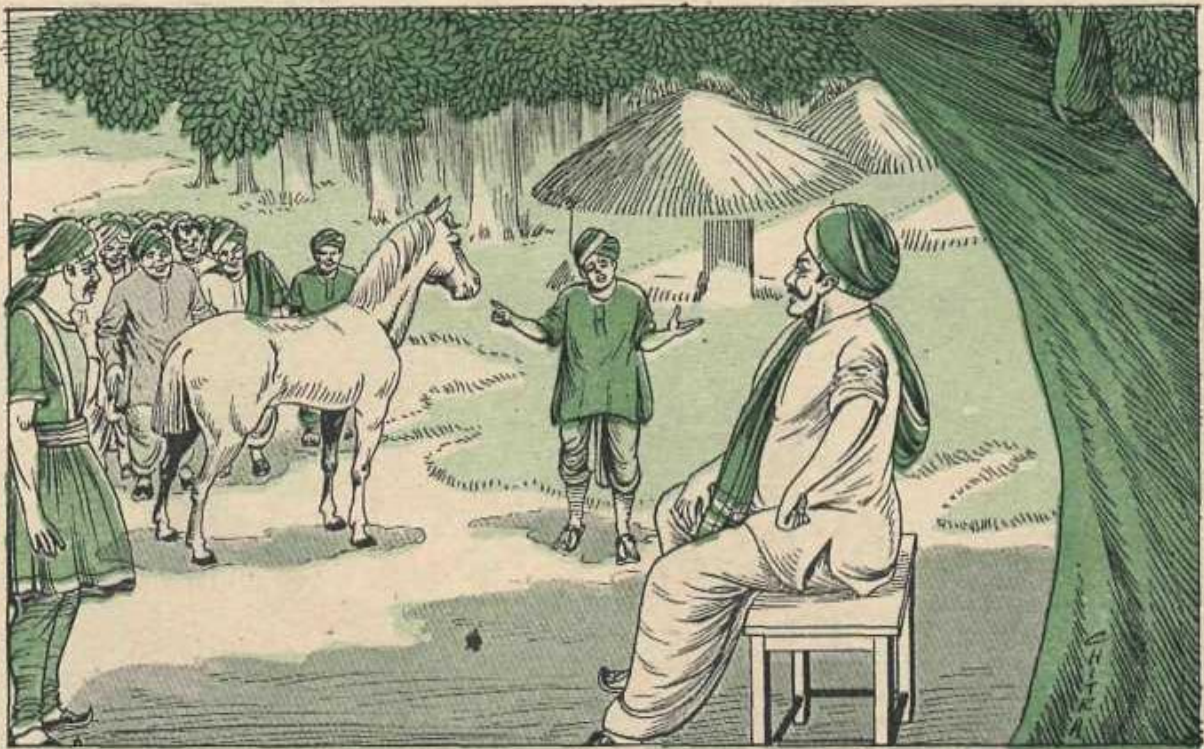
औरत की सलाह

बात उस समय की है जब फ़ारस पर बादशाह खुसरो शासन करता था। एक दिन सवेरे खुसरो अपनी बीबी शिरीन के साथ छत पर बैठा हुआ था, तब एक मछुए ने आकर बादशाह को एक बड़ी मछली भेंट की।

वह मछली बड़ी अनोखी थी। उसे देख बादशाह बड़ा खुश हुआ और मछुए को चार हज़ार दीनारें पुरस्कार में देने का खज़ांची को आदेश दिया।

शिरीन ने कई बार देखा था कि बादशाह जब भी किसी चीज़ पर प्रसन्न होता है तो दिल खोलकर इनाम दे बैठता है। यह बात उसको कतई पसंद न थी।

मछुआ पुरस्कार लेकर जब छत से नीचे उतर गया तब शिरीन ने अपने खाविंद पर गुस्सा प्रकट किया। मछुए को पुरस्कार देना उसे कतई पसंद न था।

"आप भी कैसे अजीब आदमी हैं! एक मछली के लिए कहीं चार हज़ार दीनारें इनाम दिया जाता है? इस तरह इनाम बांटते जायेंगे तो आइंदा हर चीज के लिए इनाम देने पड़ेंगे। इसलिए कोई बहाना बनाकर मछुए से वे दीनार वापस ले लीजिये।" शिरीन ने सलाह दी।

"हमने जो इनाम दिया, उसे वापस लेना वाजिब न होगा। इससे हमारी बदनामी हो जायगी! इस बार जाने दो, आइंदा देखा जायगा।" खुसरो ने शिरीन को समझाया।

"ऐसा कभी नहीं हो सकता। हमारी इज़्ज़त को बचाये रखते हुये वह इनाम वापस लिया जा सकता है। मैं आपको तरक़ीब सुझाती हूँ, सुनिये। आप मछुए को वापस बुलवा कर पूछिये–"यह मछली मादा है या नर?" अगर वह यह कहे कि

अरब की लोक कथा

मछुआ छत पर लौट आया। बादशाह ने उससे पूछा–"अभी तुमने मुझे जो मछली दी, वह नर मछली है या मादा मछली?"

मछुए ने झुककर बादशाह को सलाम किया और बोला–"हुज़ूर! इस जाति की मछलियों में मादा और नर का बिलकुल फ़र्क़ नहीं होता, हर मछली अण्डा देकर सेंकती है।"

इस पर खुसरो ठठाकर हंस पड़ा और मछुए को और चार हज़ार दीनार देने का हुक्म दिया।

मछुए ने आठ हज़ार दीनारों को अपनी टोकरी में भर लिया और बड़ी ख़ुशी के साथ चल पड़ा।

वह राजमहल के अहाते को पार करके जा ही रहा था कि टोकरी में से एक दीनार नीचे गिर पड़ा और वह लुढ़कते-लुढ़कते कहीं जा गिरा।

मछुए ने झट टोकरी उतार दी, चारों तरफ़ ढूंढ़ कर दीनार ले लिया और उसे टोकरी में डाल दिया।

छत पर से खुसरो और उसकी बीबी यह घटना देख रहे थे।

शिरीन ने अपने शौहर की ओर मुड़कर कहा–"आप देख रहे हैं न? वह मछुआ कैसा कंजूस और नीच है? उसकी टोकरी

वह नर है, तो उससे यह कहकर यह मछली उसे वापस कर दीजिये कि हमें नर मछली नहीं चाहिये, मादा चाहिये। यदि वह इसे मादा मछली बतावे तो यह कहिये कि हमें नर मछली चाहिये। इसलिए वह पुरस्कार लौटा दो।" शिरीन ने अपने शौहर को सलाह दी।

खुसरो अपनी बीबी को बहुत चाहता था। उसे नाख़ुश करना बादशाह को पसंद न था। यों तो मछुए से इनाम के दीनारों को वापस लेना बादशाह की नजर में अपमान की बात थी, फिर भी मछुए को वापस बुलाने की नौकरों को ताक़ीद की।

में आठ हज़ार दीनारें हैं, एक दीनार के नीचे गिर जाने पर वह टोकरी उतार करके उसे ढूंढ़ने लगा है। उसमें इतनी भी उदारता नहीं है कि वह दीनार किसी गरीब के हाथ लग जाय?"

इस पर खुसरो ने अपनी बीबी को तृप्त करने के लिए मछुए को फिर वापस बुलाया और कहा–"अरे दुष्ट! एक दीनार नीचे गिर गया तो तुमने लोभ में पड़कर उसे भी ढूंढ़कर ले लिया। तुममें इतनी भी उदारता नहीं रही कि वह किसी गरीब को मिल जाय। तुम्हारे लोभ को क्या कहा जाय?"

इस बार मछुए ने ज़मीन तक झुककर बादशाह को सलाम किया और बोला– "अल्लाह बादशाह की रक्षा करे! मैंने यह कभी नहीं सोचा कि एक दीनार के खो जाने से मैं गरीब हो जाऊँगा। मेरी नज़र में वह दीनार पवित्र है। उसके एक ओर बादशाह की मुहर और दूसरी तरफ़ उनका पवित्र नाम है। मैं यह सोचकर डर गया कि उसके ज़मीन पर गिर जाने से कोई भूल से उस पर पैर रखे। अलावा इसके आपने मुझ जैसे मिट्टी तक की क़ीमत न करनेवाले को उठाया, मुझे हजारों दीनारों का पुरस्कार ही दे दिया तो मेरे द्वारा मिट्टी में गिरे दीनार को उठाने में आश्चर्य की बात क्या है?"

मछुए की अक़्लमंदी पर खुसरो बड़ा खुश हुआ और उसे चार हज़ार दीनार और पुरस्कार में देकर भेज दिया।

इस विचित्र घटना के द्वारा खुसरो को भली भांति मालूम हो गया कि औरतों की सलाह का पालन करने में कैसा खतरा मोल लेना पड़ता है! इसलिए उसने उसी दिन सारे शहर में यह ढिंढोरा पिटवा दिया–

"औरतों की सलाह के मुताबिक़ किसी को नहीं चलना चाहिए। उनकी सलाह को मानने से एक भूल को सुधारने के लिए दो भूलें और करनी पड़ती हैं।"

दीर्घायु का दिव्य औषध

चन्दन नगर के राजा में दीर्घायु के लक्षण तथा कुंदन नगर के राजा में अकाल वार्द्धक्य के लक्षण दिखाई देने लगे। इसलिए कुंदन नगर के राजा ने अपने मंत्री को चंदन नगर के राजा के पास भेजते हुए आदेश दिया कि वह दीर्घायु के रहस्य जानकर शीघ्र लौटे, यदि इसके लिए कोई औषध हो तो उसका पता लगावे, इस रहस्य को जाने बिना लौट आये, तो उसे फाँसी के तख़्ते पर चढ़ाया जायगा।

मंत्री जब चन्दन नगर पहुँचा, तब वहाँ के राजा ने एक बरगद के नीचे डेरा डलवा कर मंत्री को उसमें रखा, उसके खाने-पीने का बढ़िया इंतज़ाम भी किया। दिन बीतते गये, मगर चन्दन नगर के राजा ने मंत्री को दीर्घायु का रहस्य नहीं बताया।

इस प्रकार कई सप्ताह और महीने बीत गये। कुंदन नगर का मंत्री मानसिक व्यथा से घुटता गया। यहाँ का राजा तो रहस्य नहीं बता रहा है, बिना रहस्य के जाने लौटने पर उसका मालिक उसे फाँसी पर चढ़वा देगा। इसी चिंता में वह बरगद के नीचे टहलने लगा।

एक दिन अचानक बरगद के पेड़ में आग लग गयी। चंदन नगर के राजा ने कुंदन नगर के मंत्री को बुलाकर कहा–"देखते हो न? तुम्हारी आह के लगने से यह बरगद जल गया है, इसी प्रकार जनता की आह के लगने से तुम्हारे राजा की भी यही हालत होती है। इसलिए राजा के दीर्घायु होने का रहस्य यह है कि वह जनता को हर तरह सुखी रखने का प्रयत्न करे। तुम यह बात अपने राजा को समझा दो।"

जूतों की करामात
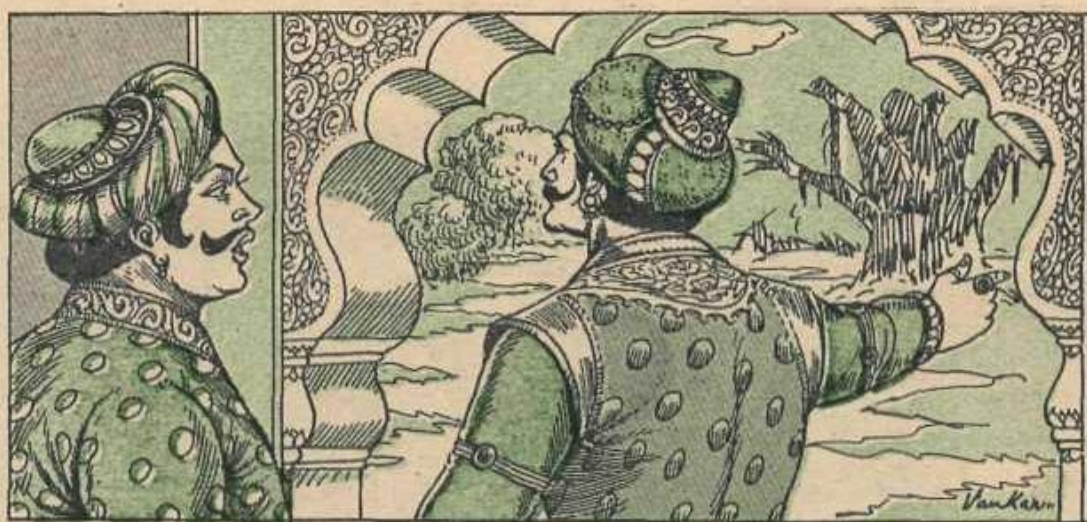
एक जमाने की बात है। कइरो में अबू कासिम नामक एक दवाफ़रोश रहा करता था। वह अव्वल दर्जे का कंजूस था। उसे व्यापार में बड़ा नफ़ा होता था, फिर भी वह एक भी कौड़ी खर्च नहीं करता था। भिखारियों के चिथड़ों से बदतर कपड़े वह पहना करता था। उसकी पगड़ी एकदम फटी-पुरानी थी और उसका रंग भी धुल गया था। लेकिन सब से मशहूर तो उसके जूते थे। वे इतने पुराने थे कि चमारों ने उनमें सैकड़ों दफ़े हज़ारों कील टांके थे। उनमें चमड़े की कितनी ही पैबंदें लगी थीं। इस तरह कई वर्षों से मरम्मत होकर जूतों का बोझ भी बढ़ गया था।

अबू कासिम के जूतों की चर्चा हर जगह हुआ करती थी। बोझा ढोनेवाले मज़दूर हाँफते कहते–"ओह, यह बोरा तो अबू कासिम के जूतों के बराबर है।" यदि किसी को पेट में दर्द होता तो कह उठता–"मैंने जो खाना खाया, वह अबू कासिम के जूतों जैसा काम कर रहा है।"

एक बार अबू कासिम को व्यापार में बड़ा नफ़ा हुआ। अगर कोई दूसरा व्यापारी होता तो सभी व्यापारियों को बुलाकर बढ़िया दावत देता, मगर अबू कासिम में ऐसी कोई आदत ही न थी। अच्छा नफ़ा हाथ लगने से मानो पर्व मनाने वाले जैसा उसने हमाम में जाकर नहाना चाहा। क्योंकि उसके हमाम में गये कई साल गुज़र गये थे।

अबू कासिम के मन में इस विचार के आते ही उसने दूकान बंद की और यह सोचकर उसने अपने जूते कंधे पर डाल दिये कि पहनने से वे घिस जायेंगे। तब वह सीधे हमाम जा पहुँचा। हमाम के

प्रकाशमल जैन

बाहर जहाँ सभी लोग जूते उतारकर रखते हैं, वहाँ अपने जूते रखे और वह हमाम के भीतर चला गया ।

अबू कासिम के शरीर में सालों से मिट्टी जम गयी थी । नहलानेवालों को कई बार कासिम के शरीर पर उबटन लगाना पड़ा । जब वह नहाकर बाहर आया, तब सूरज डूबने को था । तब तक नहाने के लिए आये हुए सभी लोग अपने अपने घर जा चुके थे ।

हमाम के बाहर कासिम के जूतों की जगह हरे रंग के चमड़े से बनाये गये नये जूतों का जोड़ा दिखाई दिया ।

"ऐसे जूते मैं कई सालों से खरीदना चाहता था । लगता है कि यह खबर अल्लाह को भी लग गयी । इसीलिए उसने मुझे पुरस्कार के रूप ये जूते भेजे हैं । या यह भी हो सकता है, कि कोई भूल से इन जूतों के बदले मेरे जूते पहनकर चले गये हों!" ये बातें सोचते कासिम ने उन नये जूतों को पहन लिया और बड़ी ख़ुशी-ख़ुशी अपने घर की ओर चल पड़ा ।

बात यह थी कि वे नये जूते काजी साहब के थे । काजी साहब उस वक़्त हमाम में नहा रहे थे । लेकिन कासिम के जूते उसे इसलिए दिखाई नहीं दिये कि जूतों की रखवाली करनेवाले ने जब नये जूतों के बीच कासिम के भद्दे जूते देखे, तब वह नाराज़ हो गया और उन्हें एक कोने में ले जाकर रख दिया । अबू

कासिम को हमाम से बाहर आने में बड़ी देरी हो गयी और इस बीच पहरेदार का समय हो गया था, इसलिए वह घर चला गया।

काजी ने नहा चुकने के बाद घर लौटते हुए अपने जूते माँगे। हमाम के नौकरों ने सब जगह खोज की, उन्हें कासिम के जूते मिल गये। कासिम के जूते सब जगह मशहूर थे, इसलिए नौकरों ने जल्दी उस आदमी का पता लगाया।

यह बात स्पष्ट हो गयी कि अबू कासिम अपने जूतों को छोड़ काजी साहब के जूते पहनकर ले गया है। हमाम के नौकरों ने जाकर कासिम को काजी के जूतों के साथ बुला लाकर काजी के सामने खड़ा किया।

काजी ने अपने जूते तो वापस लिये, उल्टे कासिम को क़ैदखाने में रखवाया। जेल के अधिकारियों को भारी घूस देकर कासिम घर लौटा।

इस घटना के बाद कासिम को अपने जूतों पर बड़ा क्रोध आया। उसने उन जूतों को ले जाकर नील नदी में फेंक दिया और सोचा कि पिंड छूट गया है। लेकिन इतनी आसानी से वे जूते उसे छोड़नेवाले न थे।

इसके कुछ दिन बाद कुछ मछियारे नील नदी में मछलियाँ पकड़ने गये। उन लोगों ने ज्यों ही नदी में जाल फेंका, त्यों ही उसमें कोई भारी चीज़ लगी। जाल को बाहर खींचकर देखा तो उसमें कासिम

के जूते थे। उन जूतों के कीलों की वजह से जाल कई जगह कट गया था।

मछियारों ने भी आसानी से कासिम के जूतों को पहचान लिया। वे लोग उन जूतों के साथ कासिम की दूकान पर पहुँचे। कासिम को खूब गालियाँ दीं और जूतों को दूकान में फेंक दिया। जूतों के लगने से कासिम की दवाइयों तथा इत्र की शीशियाँ नीचे गिरकर फूट गयीं। इस तरह उसे काफ़ी नुक़सान पहुँचा।

अबू कासिम के दुख की सीमा न रही। उसने जी भरकर अपने जूतों को कोसा। उन्हें पिछवाड़े में ले गया, गाढ़ने के लिए एक गड्डा खोदने लगा।

अबू कासिम के पड़ोसी ने इसे भाँप लिया। वह कासिम से जलता था। उसने नगर के अधिकारी के पास फ़रियाद की–"साहब, अबू कासिम आप से बताये बिना गढ़े खजाने को खोदकर ले रहा है।"

सब लोग यह जानते थे कि अबू कासिम बड़ा लोभी है। इसलिए अधिकारी ने उस फ़रियाद पर विश्वास किया और कासिम को अपनी कचहरी में बुला भेजा।

"मैं अपने जूतों को गाढ़ने के लिए गड्डा खोद रहा था। न मेरे पिछवाड़े में खजाना गढ़ा है और न इस शिकायत में सचाई है।" कासिम ने शपथ खायी, लेकिन अधिकारी ने आखिर एक मोटी रक़म घूस लेकर कासिम को मुक्त किया।

अबू कासिम ने मारे दुख के अपनी दाढ़ी नोच ली। इस बार वह उन जूतों को नगर के बाहर ले गया और एक नहर में फेंककर यह सोचते घर लौटा कि सदा के लिए इन जूतों का पिण्ड छूट गया है।

लेकिन यह उसका भ्रम ही निकला। दुर्भाग्य और भी उसका पीछा कर रहा था। उस नहर पर एक यंत्र लगा था। कासिम के जूते पानी में बहते उस यंत्र की पेंच में अटक गये जिससे पानी का बहना बंद हो गया।

यंत्र की मरम्मत करते समय कासिम के जूते बाहर निकल आये। यंत्र के मालिक ने उन जूतों को पहचान लिया और हर्जाना दिलाने के लिए कासिम पर शिकायत की। इससे अबू कासिम को बड़ा भारी जुर्माना चुकाना पड़ा।

अबू कासिम को लगा कि वह पागल होता जा रहा है। जूतों से पिंड छुड़ाने के लिए वह उन्हें छत पर ले गया और एक दीवार पर रखकर सोच में पड़ गया कि इन्हें क्या किया जायें। इतने में पड़ोसी मकान पर एक कुत्ता आया। जूतों को देख वह खींचातानी करने लगा, जिससे वे जूते एक गली में जा गिरे।

दुर्भाग्य से उस वक़्त गली से होकर एक बूढ़ी जा रही थी। भारी जूतों के उसके सर पर गिरने से उसने वहीं पर दम तोड़ दिया।

उस वक़्त रास्ते चलनेवाले लोगों ने बूढ़ी को घेर लिया और अबू कासिम को गालियाँ सुनाने लगे। उस समय कहीं से कुछ राजभट आये और कासिम को ले जाकर जेलखाने में बंद किया।

बूढ़ी के रिश्तेदारों को कासिम ने हर्जाना दिया और जेल के अधिकारियों को भी भारी रक़म रिश्वत देकर जेल से छूट गया।

अब तक कासिम में ज्ञानोदय हो चुका था! दूसरे दिन सवेरे कासिम अपने जूतों को लेकर काजी के पास गया और बोला–"सरकार, इन कमबख्त जूतों ने मेरा घर उजाड़ दिया है। इनकी वज़ह से मैं अमीर से भिखारी बन गया हूँ। मैं आपसे यह बिनती करता हूँ कि आज से ये जूते मुझे नहीं चाहिये। मैं इन्हें छोड़ देता हूँ। इन जूतों के द्वारा किसी को अगर किसी प्रकार का नुक़सान हो तो उसकी जिम्मेदारी मुझपर न होगी। इस बात को आप क़ानूनन मंजूर करने की मेहर्बानी करें।"

इन बातों को सुनकर काजी के साथ कचहरी में बैठे सभी लोगों के पेट में हँसते-हँसते बल पड़ गये।

ऋणानुबंधम्

पुराने जमाने की बात है। धारानगरी में धर्मु नामक एक चमार था। वह जूते सीकर अपने दिन बिता देता था। साथ ही रात के वक़्त शहर में पहरा देने वाले चौकीदार का काम भी करता था। धर्मु सारी रात जाग कर सारे शहर में घूमते हर पहर पर चिल्ला कर लोगों को चेतावनी देता था–"चोरों से सावधान रहो!"

धर्मु का वक़्त तो बड़ी आसानी से गुजर जाता था, लेकिन यह चिंता उस के मन को खाये जा रही थी कि उसे अब तक कोई संतान नहीं हुई है।

उस गाँव में एक नामी पंडित था। धर्मु जब पहरा समाप्त कर घर लौटता था, तब वह पंडित नदी में नहाने के लिए घर से निकल पड़ता था। एक दिन की बात है कि पंडित नहाने के लिए नदी की ओर जा रहा था, तभी धर्मु ने सामने आकर उन्हें प्रणाम किया और उनसे प्रार्थना की कि वे उसे ऐसा आशीर्वाद दे जिस से उसके संतान हो!

इस पर पंडित ने समझाया–"धर्मु! तुम संतान न होने की चिंता ही क्यों करते हो? बड़ों ने कहा है:–

'ऋणानुबंध रूपेणा
पशु पत्नि सुतालया

अर्थात, पत्नी, बच्चे, पशु, घर-द्वार इत्यादि केवल ऋणानुबंध के कारण ही प्राप्त होते हैं। उस ऋण के चुकते ही वे सब अदृश्य हो जाते हैं।" ये बातें कहकर पंडित स्नान करने चला गया।

पंडित के इस उपदेश के कारण धर्मु के मन में वैराग्य तो पैदा नहीं हुआ, बल्कि उसके मन में यह विचार सूझा–"मेरे धन का कोई उपयोग करके, उसका बदला न चुकावे तो वह मेरे ऋणी होगा। ऐसी

अनिल कुमार

किस्मत की करामात!

एक अमीर के बगीचे में भोलाराम नामक एक माली काम करता था। अमीर दुष्ट स्वभाव का था। उसका बेटा भी छोटी-बड़ी चोरियाँ किया करता था।

एक दिन भोलाराम के पास एक आदमी आया और उसके हाथ सौ रुपये देते हुए बोला–"भाई साहब! तुम्हारी सास मरते वक़्त तुम्हें सौंपने के लिए सौ रुपये दे गयी है! सावधानी से रखो।" रुपये देकर वह आदमी चला गया।

भोलाराम ने सोचा कि दूसरे दिन अपने मालिक से आज्ञा लेकर अपने गाँव चला जाय और इस धन से अपने परिवार को पालने का कोई उपाय किया जाय। यह सोचकर उसने ये रुपये अपनी झोंपड़ी में नहीं रखे, बल्कि एक कपड़े में बाँधकर निकट के इमली के पेड़ के खोखले में छिपा रखा।

माली को रुपये छिपाते अमीर के लड़के ने देख लिया। भोलाराम जब रुपये छिपाकर अपनी झोंपड़ी में गया तब अमीर का लड़का खोखले से रुपये ले आया और अपने पिता से बोला–"पिताजी, मुझे ये रुपये हमारे बगीचे में मिले हैं, ले लीजिये।"

दूसरे दिन भोलाराम अपने मालिक से विदा लेकर घर चला गया। इसके बाद अमीर के लड़के ने घर लौटकर अपने पिता को दुखी देख पूछा–"पिताजी, आप दुखी क्यों हैं?"

"कल तुमने जो रुपये दिये, वे दिखाई नहीं देते, बेटा।" अमीर ने जवाब दिया।

"आपने उसे कहाँ छिपा रखा था?" बेटे ने पूछा।

"बगीचे में इमली के पेड़ के खोखले में छिपा रखा था।" अमीर ने उत्तर दिया।

हालत में उसे मेरे यहाँ जन्मधारण करके मेरा ऋण चुकाना पड़ेगा। इस प्रकार मेरे संतान होने की संभावना है।

इस विचार के आते ही धर्मु ने यह निश्चय कर लिया कि वह जो जूते सीता है, उन्हें बिना धन लिये ग्राहक को दे दिया जाय। लेकिन सबने यह कहकर मुफ़्त में जूते लेने से इनकार किया कि तुम से मुफ़्त में जूते लेकर तुम्हारे ऋणी हम क्यों बने?

इसके बाद धर्मु ने एक दूसरा उपाय सोचा, वह यह कि गाँव तथा नदी के बीच लगभग डेढ़ कोस की दूरी तक रेतीला मैदान पड़ता है। मैं एक जोड़ जूते बीच रास्ते में छोड़ आऊँगा। कड़ी दुपहरी में क्या एक भी व्यक्ति बिना जूते के उधर से न गुजरेगा? उनमें से कोई न कोई ज़रूर मेरे जूते पहनेगा! वह मेरा ऋणी तो निश्चय ही बन जायगा!

यह निश्चय कर धर्मु सवेरे उठा। एक नये जोड़े जूते लेकर रेतीले मैदान के बीच छोड़ आया। शाम को जाकर देखा तो जूते ज्यों के त्यों वहीं थे। कई दिन गुजर गये, लेकिन किसीने वे जूते नहीं पहने। इस पर धर्मु बड़ा निराश हुआ। वह सोचने लगा–"भगवन्, अब तो मेरे कोई संतान होने की संभावना नहीं है। वरना उस नये जोड़े की आशा कोई क्यों नहीं करता? मेरा ऋणी कोई क्यों नहीं बनता?"

फिर भी धर्मु अपनी लगन पर पक्का रहा, वह उन जूतों को बीच रास्ते में ही छोड़ रोज़ शाम को जाकर देख आता था।

कुछ दिन और बीत गये। एक दिन शाम को धर्मु ने जाकर देखा, जूतों का जोड़ा वहाँ पर न था।

"मेरा प्रयत्न इतने दिन बाद सफल हो गया है। मेरी क़िस्मत खुल गयी है।" यह सोच कर धर्मु दौड़े घर पहुँचा और यह ख़ुश ख़बरी अपनी पत्नी को दी। वह भी फूली न समायी।

लेकिन धर्मु यह नहीं जानता था कि कौन वे जूते ले गया है और न उसे जानने की इच्छा ही उसके मन में पैदा हुई।

२

बात यह थी कि जिस पंडित ने धर्मु को ऋणानुबंध का उपदेश दिया था, उसे एक दिन किसी ज़रूरी काम से पड़ोसी गाँव में जाना पड़ा। वह अपना काम समाप्त कर जब घर लौटने को हुआ, तब तक दोपहर हो चुकी थी। पैरों में जूते न थे। इसलिए बालू में चलने के कारण उसके पैरों में छाले पड़ गये। वह बड़ा परेशान था, तभी उसकी दृष्टि उन नये जूतों पर पड़ी। पंडित की जान में जान आ गयी। पंडित ने सोचा कि कोई चमार इन जूतों को बेचने लाया होगा। यहाँ छोड़ कर कहीं चला गया होगा। यह सोच कर पंडित ने चारों तरफ़ अपनी नज़र दौड़ायी,
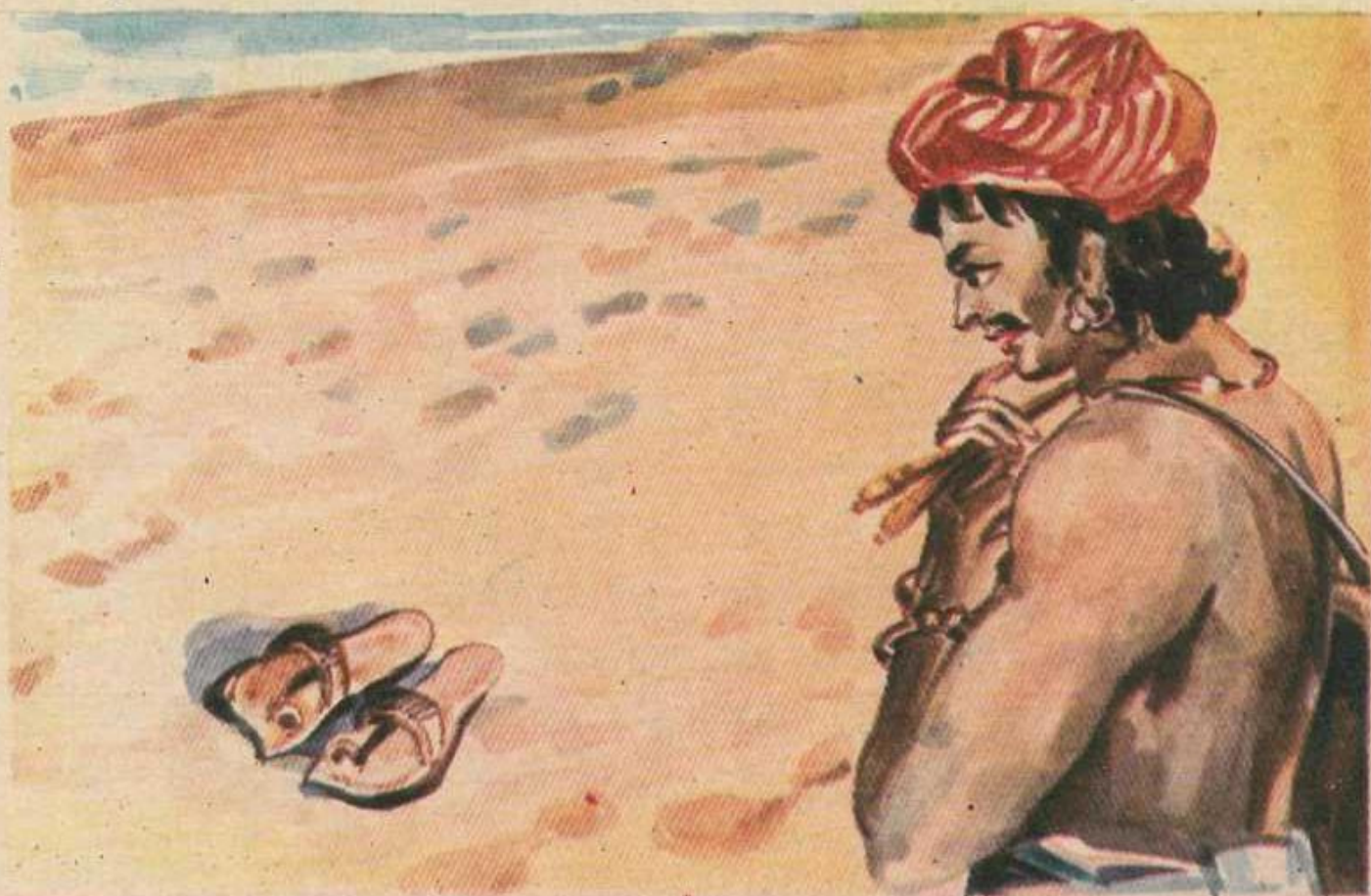
शायद जूतेवाला उसे दिखाई दे, लेकिन कोई उधर से नहीं निकला।

तब पंडित ने सोचा–'मैं ये जूते पहन लेता हूँ। गाँव में जाकर पता लगाऊँगा कि ये जूते किसके हैं। तब उसे जूतों का दाम दे दूंगा।' यह सोच कर पंडित ने जूते पहने और धीरे से गाँव में जा पहुँचा। उस दिन शाम को पंडित ने गाँव के सभी चमारों को बुला भेजा और दरियाफ़्त किया, मगर सबने यही बताया कि ये जूते हमारे नहीं हैं और न हमने उन्हें उस रेतीले मैदान में रखे हैं। मगर धर्मु यह सोच कर कुछ दिन तक पंडित से आँख बचाकर घूमता रहा कि कहीं उसका रहस्य खुल न जाय!

पंडित ने बहुत ही कोशिश की कि जूतेवाले का पता लगावे, पर उसके सारे प्रयत्न बेकार गये। उसे बड़ी चिंता हुई। इसी चिंता के करण वह चन्द दिनों में बीमार पड़ा और उसकी मृत्यु भी हो गयी। पर वह धर्मु का ऋणी हो गया था, इसलिए यह ऋण चुकाने के लिए वह धर्मु की पत्नी के पेट में जा पहुँचा।

३

धर्मु की पत्नी ने दस महीने तक गर्भधारण के बाद एक सुंदर बच्चे का जन्म दिया। चमारों की बस्ती में सब लोग बहुत ही प्रसन्न हुए और सब ने उत्सव भी मनाया। धर्मु और उसकी पत्नी की ख़ुशी का ठिकाना न रहा। माँ-बाप ने बच्चे का नाम रईदास रखा।

रईदास जब बड़ा हुआ, तब वह भी अपने बाप की तरह जूते सीता, उन्हें बेचकर पैसे लाता। रईदास वे पैसे धर्मु के हाथ देता तो वह लेने से इनकार करता।

धर्मु का डर था कि यदि वह अपने बेटे के हाथ से पैसे ले तो, उसका अपने बेटे के साथ जो ऋणानुबंध है, वह टूट जायगा। यह बात धर्मु ने अपनी पत्नी को बतायी और उसे यह चेतावनी भी दी कि यदि वह पैसे ला दे तो उसे न ले।

रईदास जानता था कि पिछले जन्म में वह फलाना पंडित था। यह भी जानता था कि वह धर्मु के पुत्र के रूप में क्यों पैदा हो गया है। इसलिए वह हमेशा यही सोचा करता था कि वह कब उन जूतों का ऋण चुकायेगा और कब इस जन्म से मुक्ति पायेगा। मगर वह जो कुछ कमा कर लाता, उसे उसके माँ-बाप स्वीकार नहीं करते थे, इसलिए शीघ्र उसका ऋणानुबंध टूटता न था।

एक दिन की बात है कि धर्मु को किसी गाँव में जाना पड़ा। उसने अपने बेटे को बुलाकर कहा—"बेटा रईदास! मैं आज फलाने गाँव जा रहा हूँ। आज की रात को तुम मेरे बदले सारे शहर में पहरा दो। लोगों को हर पहर पर चोरों से सावधान करते रहो!"

अपने बाप के कहे अनुसार रईदास रात को शहर में पहरा देने चल पड़ा। उसके साथ जो और एक पहरेदार था, उसने समझाया—"रईदास, अभी रात का एक पहर बीत गया है। गहरी नींद सोनेवालों को जगा कर सावधान रहने की चेतावनी दो।"

इस पर रईदास ऊँचे स्वर में एक श्लोक सुनाने लगा :

"माता नास्ति, पिता नास्ति,
नास्ति बन्धु, स्सहोदरः,
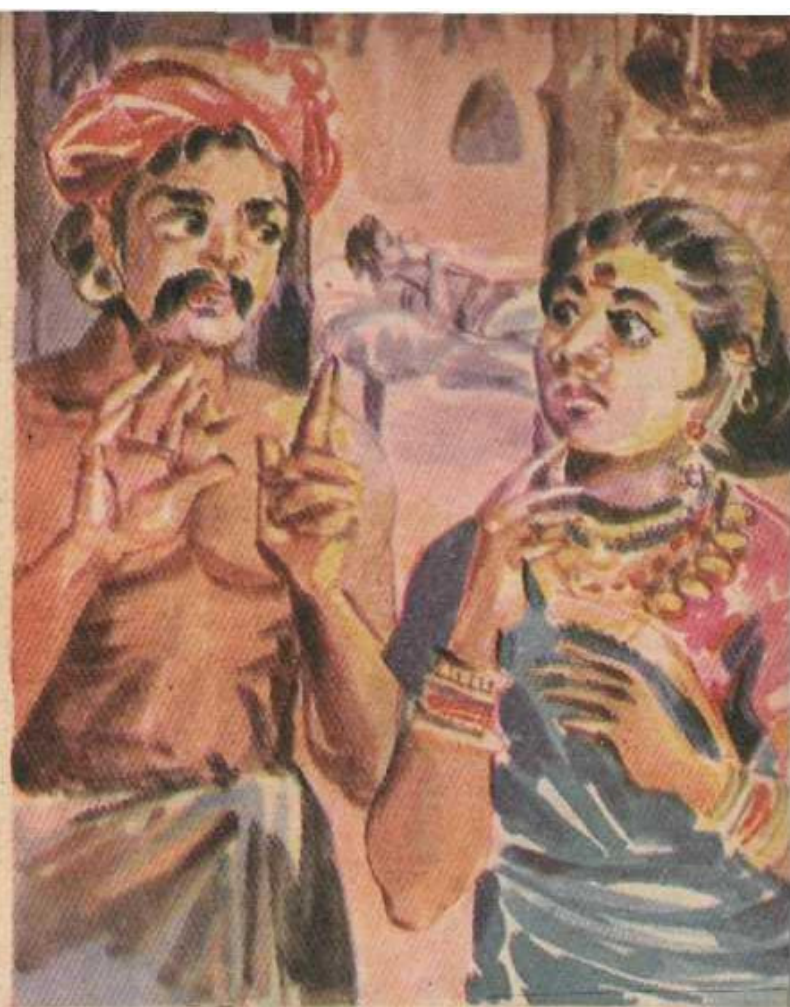
अर्थ नास्ति, गृहं नास्ति,
तस्मात् जाग्रत, जाग्रत!"

साथ चलनेवाले पहरेदार ने विस्मय में आकर रईदास से पूछा—"अरे भाई, इस श्लोक का क्या मतलब है?"

इस पर रईदास ने समझाया—"हमारे न कोई माता है, न पिता है, न कोई बन्धु है और न कोई भाई! हमारे कोई धन नहीं, घर भी नहीं है, इसलिए सावधान रहो।"

एक पहर और बीत गया, तब रईदास ने दूसरा श्लोक पढ़ा :

"काम क्रोधश्च, लोभश्च
देहे तिष्ठंति तस्कराः

ज्ञान रत्नापहराय,
तस्मात् जाग्रत जाग्रत!"

रईदास ने जब यह श्लोक पढ़कर लोगों को जगाया तब उसके साथी पहरेदार को इस बात का आश्चर्य हुआ कि इसने ऐसी शिक्षा कब और कहाँ प्राप्त की। तब उसने रईदास से इस श्लोक का भी अर्थ पूछा।

"काम, क्रोध और लोभ नामक चोर हमारे ज्ञान रूपी रत्न को चुराने के लिए हमारे शरीर में छिपे बैठे हैं। इसलिए तुम सावधान रहो।" रईदास ने यों अर्थ बताया।

पहरेदार एक दम आश्चर्यचकित हो गया। उसने रईदास से कहा–"रईदास, तुम्हारी ये बातें मुझे आश्चर्य में डाल रही हैं। आज तक तुम्हारे बाप तो लोटा-बर्तन उठा ले जानेवाले चोरों से बचने की चेतावनी देते आया है, लेकिन ऐसे चोरों के बारे में उसने कभी कुछ नहीं कहा था। ये सारी बातें तुमने कब सीखीं?"

देखते-देखते तीसरा पहर भी बीत गया। सोनेवाले लोगों को जगाकर सावधान करते हुए रईदास ने एक और श्लोक पढ़ा :

"जन्म दुःखम्, जरा दुःखम्
जाया दुःखम्, पुनः, पुनः
संसार सागरम्, दुःखम्
तस्मात्! जाग्रत, जाग्रत!"

यह श्लोक सुनकर पहरेदार एकदम चकित रह गया। उसने फिर पूछा–

"रईदास, तुम एक साथ कई दु:खों की बात कहते हो! ज़रा इनका भी तो अर्थ समझा दो।"

इस पर रईदास ने समझाया–"हमारा जन्मधारण करना ही एक दु:ख है, बुढ़ापा दुख है, पत्नी एक दुख है, गृहस्थी ही समुद्र जैसा एक व्यापक दु:ख है। इसलिए तुम सब सावधान रहो।"

"अरे भाई, तुम्हारे पिता तो एक अच्छी कन्या को देख तुम्हारी शादी करना चाहते हैं, तुम तो वैराग्य की बातें करते हो! बात क्या है?" पहरेदार ने पूछा।

थोड़ी देर में चौथा पहर भी समाप्त हो गया। तब रईदास ने अपना पहरा देना समाप्त करते हुए यह श्लोक पढ़ा:

"आशया बद्धते, लोके
कर्मणा बहु चिंतया,
आयु क्षीणम् न जानाति,
तस्मात् जाग्रत, जाग्रत!"

पहरेदार ने इस श्लोक का भी अर्थ बताने पर ज़ोर दिया। इस पर रईदास ने यों समझाया–"आशा, कर्म तथा अनेक चिंताओं के साथ यह जगत बंधा हुआ है। इनके बीच आयु के क्षीण होने की बात लोग बहुत कम जानते हैं। इसलिए सावधान रहो।"

रईदास ने प्रथम प्रहर में जो श्लोक पढ़ा था, उस शहर के राजा ने उसे सुन लिया था। राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। वह इस ख्याल से जागता रहा कि शायद और श्लोक

उसे सुनाई दे। इसलिए जागते-जागते उसने बाक़ी तीन श्लोक भी सुन लिये।

सवेरा होते ही राजा ने अपने भटों को आदेश दिया कि रात में पहरा देनेवाले पहरेदार को हाज़िर करे। रईदास जब राजा के सामने आया तब राजा ने उसे प्रणाम करके कहा–"महाशय, आप तो कोई बड़े विद्वान हैं, साधारण व्यक्ति नहीं हैं। वरना एक पहरेदार को ऐसा पांडित्य कहाँ से प्राप्त होगा? मुझ पर मेहर्बानी करके ये पुरस्कार ग्रहण कीजिये।" इन शब्दों के साथ राजा ने स्वर्ण मुद्राओं से भरी एक थैली रईदास की ओर बढ़ायी।

लेकिन रईदास को उस धन से क्या मतलब था? फिर भी वह थैली अपने माता-पिता को सौंपकर उनके ऋण से मुक्त होने का संकल्प कर उसने उस थैली को ले लिया।

दूसरे दिन धर्मु गाँव से लौट आया। रईदास जानता था कि उसे राजा से जो धन प्राप्त हुआ है, वह धन उसका पिता स्वीकार न करेगा। इसलिए वह सोच में पड़ गया कि वह धन क्या किया जाय। इस बीच चमारों की बस्ती में आग लग गयी। सभी लोग अपने घरों से जलने से बचाने के लिए सारी चीजें बाहर पहुँचा रहे थे। रईदास भी घर से एक एक सामान लाकर बाहर खड़े अपने पिता के हाथ देता रहा। धर्मु उस सामान को लेकर बाहर क़रीने से रखता गया।

इस बीच मौक़ा पाकर रईदास ने वह थैली भी अपने पिता के हाथ दी, जो उसे राजा से पुरस्कार में प्राप्त हुई थी। धर्मु ने यह भी नहीं देखा कि उसमें क्या है, और उसे बाक़ी सामानों के साथ रख दिया। रईदास यह सोचकर प्रसन्न हुआ कि उसका ऋण चुक गया है। इसके बाद वह जलनेवाले घर के भीतर फिर चला गया और लौटकर न आया।

धर्मु को असली बात समझने में देर न लगी। उसके पुत्र के रूप में पैदा हुए पंडित ने जो उपदेश दिया था, उसका स्मरण करके वह भी ज्ञानी हो गया।

अपराध की जाँच

राजा प्रसेनजित श्रावस्ती नगर पर शासन करता था। एक दिन किसी दूर देश से एक ब्राह्मण उस नगर में आया। भाग्यवश उस ब्राह्मण की नगर के प्रसिद्ध व्यापारियों के साथ मैत्री हुई। इसलिए ब्राह्मण के लिए अन्न और वस्त्र की कमी तो न थी, उल्टे उसे पर्याप्त मात्रा में दान और दक्षिणा भी मिल जाती थीं।

ब्राह्मण अकेला था, इसलिए उसे जो कुछ धन प्राप्त होता, उस धन को सोने में बदल कर सुरक्षित रखता गया। धीरे धीरे उसके पास एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ इकट्ठी हो गयीं। ब्राह्मण की समझ में न आया कि उस संपत्ति को कहाँ पर छिपाया जाय, आख़िर उसने उस संपत्ति को जंगल में एक जगह गाढ़ दिया।

ब्राह्मण के पत्नी, पुत्र, भाई-बंधु कोई न थे, इसलिए वह संपत्ति ही उसके लिए सब-कुछ थी। वह रोज़ जंगल में चला जाता, और देखता कि कहीं कोई उसकी संपत्ति को खोदकर तो नहीं ले गया, फिर घर लौट आता।

एक दिन उसने रोज़ की भांति जंगल में जाकर देखा तो स्वर्ण-मुद्राएँ गायब थीं।

अपनी संपत्ति को न देख ब्राह्मण को लगा कि वह पागल होता जा रहा है। वह अपना सर पीटते, रोते-कलपते नगर में लौट आया और जो भी रास्ते में उसे मिला, सब से अपनी संपत्ति के खो जाने की बात कहता गया। उसे समझाना किसी के लिए संभव न हुआ।

"मेरी सारी संपत्ति चली गयी, अब मेरे जीने से क्या फ़ायदा? मैं भी नदी में कूदकर आत्महत्या कर लूँगा।" इन शब्दों के साथ ब्राह्मण नदी की ओर दौड़ पड़ा। उसी समय राजा प्रसेनजित नदी में
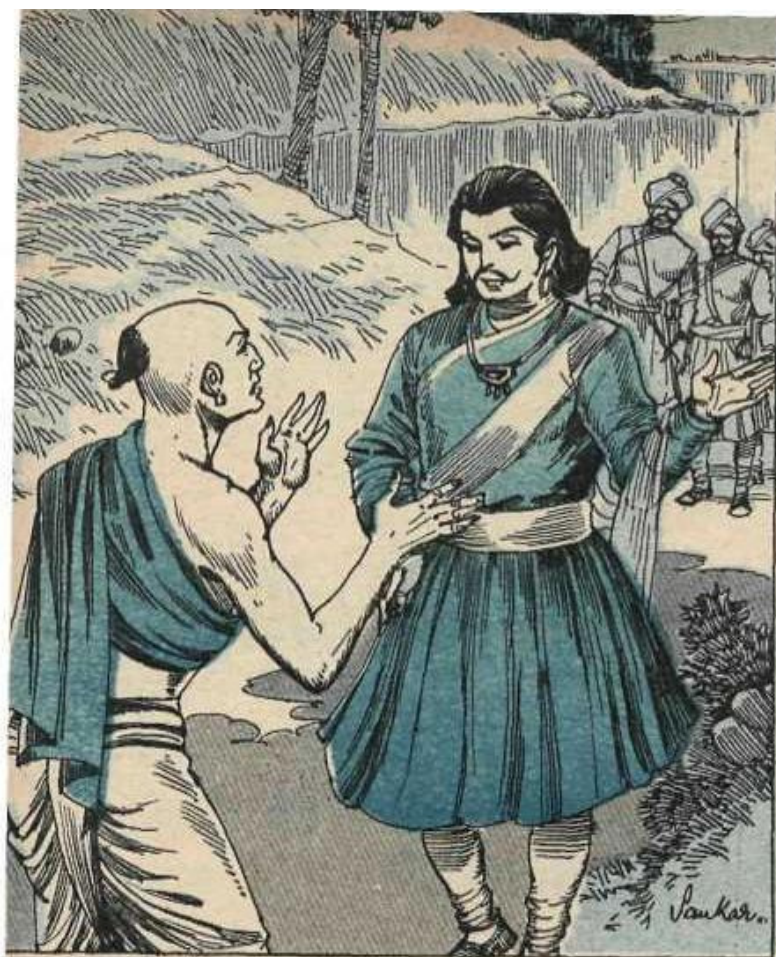
नहाकर राजमहल को लौट रहा था। नदी की ओर भागनेवाले ब्राह्मण को देख राजा ने उसे रोका और सारा वृत्तांत जानकर कहा–"हे पगले ब्राह्मण! तुम आत्महत्या क्यों करना चाहते हो? मेरे राज्य में चोरी हो गयी, तो उसकी तहक़ीकात करने के लिए में बैठा हूँ! जिसने तुम्हारी संपत्ति की चोरी की, उसे मैं पकड़ लूँगा। नहीं तो मैं अपने ख़ज़ाने से तुम्हारी संपत्ति दिलाऊँगा। क्या तुमने जहाँ पर अपनी संपत्ति छिपा रखी थी, उस जगह का हुलिया बता सकते हो?"

"महाराज, जहाँ पर मैंने अपनी संपत्ति गाड़ रखी थी, वहाँ पर नागवल (जंगली तुरई) नामक एक पौधा था। अब वहाँ पर वह भी नहीं है।" ब्राह्मण ने जवाब दिया।

"जंगली तुरई उसका सच्चा निशाना कैसे हो सकती है? ऐसे पौधे तो अनेक हो सकते हैं न?" राजा ने पूछा।

"नहीं, महाराज! उस प्रदेश में वह एक ही पौधा था।" ब्राह्मण ने कहा।

"तुमने वहाँ पर जो संपत्ति गाड़कर रखी, इसकी जानकारी कौन कौन रखते हैं?" राजा ने फिर पूछा।

"महाराज, यह रहस्य मेरे सिवा कोई नहीं जानता! असल में यह रहस्य बताने को मेरे अपने कोई नहीं है। अलावा इसके मेरे वहाँ पर जाते कभी किसी ने देखा तक नहीं है।" ब्राह्मण ने उत्तर दिया।

राजा ने ब्राह्मण को अपने घर भेज दिया। राजमहल में लौटकर इस चोरी के बारे में गहराई से विचार किया। चोर को पकड़ने का उपाय राजा के मन में शीघ्र ही सूझा।

राजा ने अपने मंत्री को बुलाकर कहा–"मंत्री महोदय, मेरी तबीयत ठीक नहीं है। वैद्यों को दिखाना ज़रूरी है। इसलिए तुम तुरंत नगर के सभी वैद्यों को मेरे पास भिजवा दो।"

राजा का आदेश पाकर नगर के सभी वैद्य राजमहल में दौड़कर आ पहुँचे।

राजा ने एक एक वैद्य को अपने कमरे में बुलाकर पूछना शुरू किया–"वैद्यजी, तुमने कल और आज किन किन बीमारियों का इलाज किया? तुम ने किन किन औषधों और जड़ीबूटियों का प्रयोग किया है?" वैद्यों के उत्तर सुनकर उन्हें भेजने लगा।

मंत्री राजा के पास बैठा हुआ था और राजा के सभी प्रश्न सुनता भी रहा, मगर उसकी समझ में नहीं आया कि राजा का उद्देश्य क्या है? एक एक करके वैद्य भीतर आ रहे हैं और राजा के सवालों का जवाब देकर बाहर जा रहे हैं।

अंत में एक वैद्य ने राजा के प्रश्नों का इस प्रकार उत्तर दिया–"महाराज, कल मातृदत्त नामक एक व्यापारी के लिए मैंने नागबल के रस के साथ औषध तैयार करके दिया है।"

इस पर राजा ने बड़ी उत्सुकता से पूछा–"ओह, ऐसी बात है, मैंने सुना है कि नागबल नामक औषध दुर्लभ है! तुम्हें वह कहाँ पर मिली?"

"आप सच कह रहे हैं महाराज! मेरे सेवक ने सारा जंगल ढूँढ़कर उसे प्राप्त किया है।" वैद्य ने जवाब दिया।

"तब तो तुम जाकर उस सेवक को जल्दी मेरे पास भेज दो।" राजा ने आदेश दिया। थोड़ी ही देर में वैद्य का

सेवक आकर राजा के सामने खड़ा हो गया।

"अरे, कल तुमने जंगली तुरई के पौधे को खोद डाला, उस वक़्त तुम्हें उसके नीचे जो एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ मिलीं, उन्हें तुमने क्या किया?" राजा ने पूछा।

सेवक का चेहरा एक दम पीला पड़ गया, वह बोला–"महाराज, उन्हें मैंने अपने घर में छिपा रखा है।"

"वे स्वर्ण मुद्राएँ फलाने ब्राह्मण की हैं, उन्हें ले जाकर उस ब्राह्मण को दे दो।" राजा ने कहा।

"जी महाराज!" यह कहकर सेवक राजा को प्रणाम करके चला गया।

मंत्री राजा के पास बैठे ये बातें सुन रहा था, उसकी समझ में न आया कि राजा ने स्वर्ण मुद्राएँ उठा ले जानेवाले का पता कैसे लगाया है? उसने यह रहस्य राजा के द्वारा ही जानने की इच्छा से पूछा–"महाराज, इस चोरी का पता आपने इतनी सरलता से कैसे लगाया? सोचने पर भी मेरी समझ में नहीं आ रहा हैं।"

राजा ने हंसकर यों जवाब दिया–"चोरी के बारे में ब्राह्मण ने जो कुछ कहा, उसे सत्य मानकर ही मैंने चोर को पकड़ने का संकल्प किया। इस नगर के लाखों लोगों में से किसी एक ने ही यह चोरी की होगी। ब्राह्मण ने मुझ से कहा था कि उसने जहाँ स्वर्णमुद्राएँ छिपा रखी थीं, यह रहस्य कोई नहीं जानता है। उस प्रदेश में धन है, यह खबर जाने बिना उस प्रदेश को खोदने कीं आवश्यकता किसे पड़ी होगी? जिसे जंगली तुरई की ज़रूरत होगी, उसी ने उस प्रदेश को खोदा होगा।

"ब्राह्मण ने मुझे स्पष्ट रूप से बताया था कि उस प्रदेश में कहीं भी जंगली तुरई का पौधा एक से ज्यादा नहीं है। सुनता हूँ कि वह पौधा बहुत कम देखने को मिलता है। मैंने ब्राह्मण की बात पर विश्वास किया। धन लेनेवाले ने पौधे के वास्ते ही उस प्रदेश को खोदा है, इसका प्रमाण यह है कि धन के साथ पौधा भी गायब हो गया है। यदि सिर्फ़ धन के वास्ते ही किसी ने उस प्रदेश को खोद लिया होता तो वह उस पौधे को वहीं छोड़ जाता।

"इस वक़्त जंगली तुरई के पौधे की किसे ज़रूरत आ पड़ी है? वैद्य को ही। इसीलिए मैंने सभी वैद्यों को बुला भेजा। जब मुझे जंगली तुरई के पौधे का प्रयोग करनेवाले वैद्य का पता चला, तभी चोर का भी मुझे पता लग गया। इसमें ऐसी कौन बात है जो समझ में न आ सके?"

राजा के मुँह से ये बातें सुनने पर मंत्री राजा की अक़्लमंदी पर मुग्ध हो गया।

सच या झूठ?

कांचनपुर की राजकुमारी जब विवाह के योग्य हो गयी तब उसके स्वयंवर का इंतज़ाम किया गया। अप्सराओं से बढ़कर अद्भुत सौंदर्यवाली उस राजकुमारी के साथ विवाह करने की इच्छा से कई राजकुमार आये। राजकुमारी ने उन राजकुमारों से कहा– "मैं ऐसे राजकुमार के साथ विवाह करूँगी जो मुझे अविश्वसनीय अद्भुत बातें सुनायेंगे।"

एक एक राजकुमार ने आगे बढ़कर अनेक असंभव बातें बतायीं, पर हर बार राजकुमारी यही कहती गयी कि "मैं इन बातों पर विश्वास कर सकती हूँ।"

अंत में एक राजकुमार ने आकर राजकुमारी से कहा–"मैं एक दिन चांदनी रात में अपने उद्यान में टहल रहा था, तब मुझे एक अद्भुत सौंदर्यवती दिखाई दी। वह मुझ से यह कहकर गायब हो गयी कि वह मेरे साथ ही विवाह करेगी, इसलिए उसके वास्ते स्वयंवर का जहाँ प्रबंध किया जायगा, वहाँ पर मैं अवश्य पहुँच जाऊँ! मगर इस स्वयंवर में तुमको देखते ही मैंने पहचान लिया कि वह अद्भुत सौंदर्यवती तुम्हीं हो।"

राजकुमारी यदि इस बात पर विश्वास करे तो उसे अपने वचन के मुताबिक़ उस युवक के साथ विवाह करना होगा। विश्वास न करे, तब भी उसने जो परीक्षा ली, उसमें वह युवक सफल हुआ था, अतः उसके साथ विवाह करना होगा। इसलिए राजकुमारी ने उस राजकुमार के साथ विवाह कर लिया।

Photo by M. Natarajan
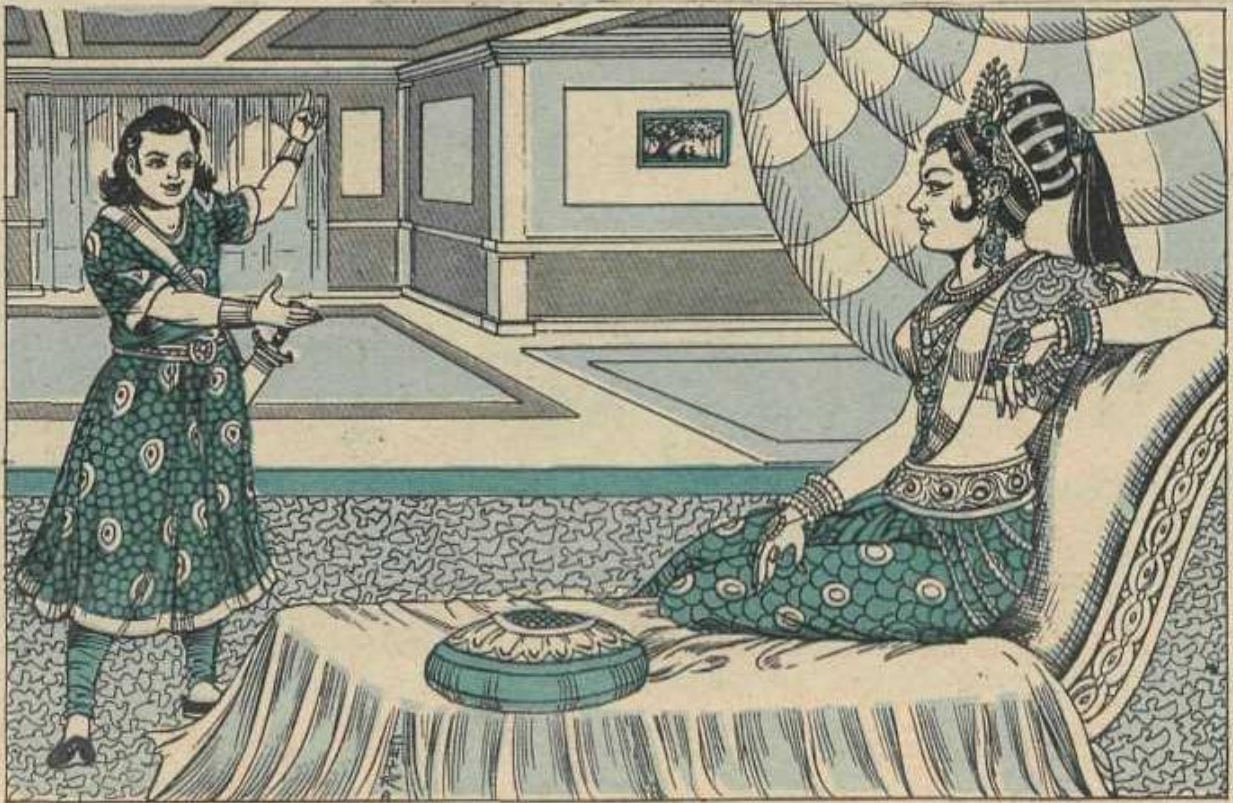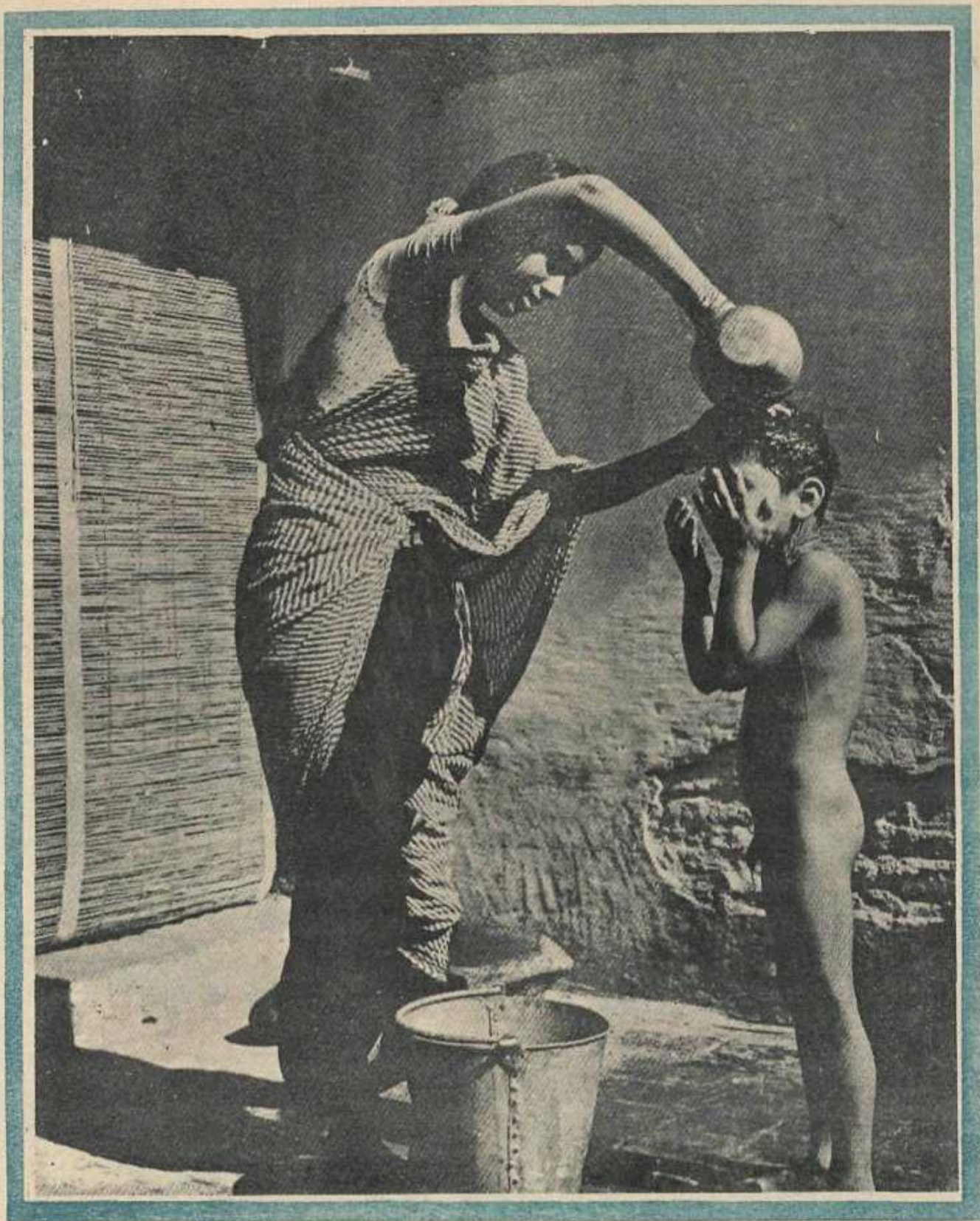
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

पहले खाने की सजा

प्रेषक :
व्ही. राजेश्वरराव

Photo by M. Natarajan

लाल बहादूर उ. मा. शाला
बिलासपुर (म. प्र.)

बाद में खाने का मजा

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★ परिचयोक्तियाँ जुलाई ५ तक प्राप्त होनी चाहिए।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ सितम्बर के अंक में प्रकाशित की जायंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

मुखपृष्ठ का चित्र: **बेताल कथा** अंतिमपृष्ठ का चित्र: **ऋणानुबंधम**

दूसरा मुखपृष्ठ: **मुरलीकृष्ण** तीसरा मुखपृष्ठ: **गोपीकृष्ण**

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI

Photo by : SURAJ N. SHARMA